आत्मा और मन का संवाद-मन पर नियन्त्रण



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

जब मत्यु नहीं होती है, वहाँ मृत्यु का भय क्यों होने लगा। मेरे पुत्रों! हमें प्रभु के राष्ट्र पर विचार विनिमय करना है। यह संसार तो परम्परा से ही सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण से ही बंधा हुआ नृत्य कर रहा। परन्तु आज से नहीं, परम्परा से ही संसार में कहीं देवासुर संग्राम हो रहा है, कहीं एक राष्ट्र दूसरे को नष्ट कर रहा है। कहीं भौतिक विज्ञान विशेष बलवती हो गया, तो वह विनाश को प्राप्त हो गया। परन्तु वही विज्ञान जब आध्यात्मिकवाद में परिणित हो गया तो प्रकाश में चला गया। विज्ञान का सदुपयोग उससे हो गया।

परन्तु विचारना यह है कि हमें अपने कार्य में कितना व्यस्त रहना है। मानव को इस अपने मनीराम को सान्तवना नही देनी है। यह जब सान्तवना को प्राप्त होता है तब ही यह मानव की मृत्यु ले आता है, मानव की वहीं मृत्यु हो जाती है।

एक वाक्य मुझे स्मरण आ गया, पुत्रो! जो मैंने बहुत पुरातन काल में भी प्रकट किया था। एक समय राजा के यहां एक सेवक पहुंचा। राजा ने कहा, अरे तुम कौन हो? महाराज, मैं सेवक हूँ। क्या तुम सेवा करना चाहते हो? उसने कहा कि महाराज! मैं सेवा करने के लिए ही आया हूँ। राजा ने पूछा क्या वेतन लोगे? उसने कहा, मैं कोई वेतन नहीं लूंगा। मेरी एक प्रतिज्ञा है, वह आपको पूर्ण करनी होगी। राजा ने कहा क्या प्रतिज्ञा है? सेवक ने कहा कि जिस समय मुझे कार्य प्राप्त नहीं होगा, उसी समय मैं आपको मृत्यु को प्राप्त करा दूंगा। उन्होंने कहा ये तो बहुत प्रिय है। राजा ने स्वीकार कर लिया। अब बेटा! राजा कार्य उच्चारण करता और उनका कार्य होने लगा। अब कुछ ही समय में राजा के यहाँ, कार्य देने के लिए सूक्ष्मता गई।

राजा का स्वास्थ्य बड़ा प्रिय था। अब मृत्यु के भय से मुनिवरों! देखों! वह भयभीत रहने लगा। वह स्वस्थ भी नहीं रहा। उस सेवक से भयभीत था। मृत्यु नहीं चाहता था, राजा। उस समय कोई बुद्धिमान पुरूष राजा को प्राप्त हुआ। उसने कहा, अरे राजन्! तुम्हारा स्वास्थ्य तो बड़ा प्रिय था। तुम कैसे बन गए हो? राजा ने सब गाथा, उस बुद्धिमान से वर्णन की, जो योगेश्वर थे। राजा ने कहा कि महाराज! मैं मृत्यु से कैसे बच सकूँगा? उन्होंने कहा तुम उस सेवक को अपने व्यक्तिगत कार्यों में क्यों लगा रहे हो? उसे संसार के कार्य में परिणित कर दो।

मेरे प्यारे! देखों संसार का क्या कार्य है? "कर्म ब्रह्मे कृताम्" संसार का भी कार्य नहीं है, तुम्हें तो इतना ज्ञान है, तो देखो, एक दण्ड पृथ्वी में स्थापित करो और उससे कहो कि इस पर ऊर्ध्वा में, ध्रुवा में, ध्रुवा में, ऊर्ध्वा में जाओ। राजा ने वाक्य स्वीकार कर लिया और उसने अपनी राज्य स्थली पर एक दण्ड पृथ्वी में स्थापित कर दिया और मुनिवरो! सेवक से कहा, सेवक तुम इस पर आओ जाओ, गमन करते रहो। मेरे प्यारे! उन्होंने कहा, अच्छा भगवन्। तो सेवक उस पर गमन करने लगा और फिर उससे छुटकारा कहाँ? सेवक को लगातार कार्य प्राप्त होता था। मेरे प्यारे! राजा अपनी मृत्यु से बच गया, उसने अपनी मृत्यु नहीं होने दी।

मेरे प्यारे! वह सेवक, राजा और बुद्धिमान कौन हैं? इसके ऊपर विचार किया जाए। बेटा! राजा तो यह शरीर है जिसमें आत्मा विराजमान है और बुद्धिमान इसमें बुद्धि है, ज्ञान है, परन्तु यह जो मन रूपी सेवक ऐसा विचित्र है। दण्ड क्या है, तो उससे कहा कि तुम यह जो प्राण रूपी दण्ड है, इस प्राण रूपी दण्ड पर गमन करते रहो।

मेरे प्यारे! मन और प्राण का मिलान ही मुक्ति कहलाती है, मन और प्राण के मेल को योग कहते हैं। मन और प्राण के मिलान को ही सृष्टि चक्र को जानना कहते हैं। मन और प्राण की आभा को जानना ही संसार में पितर बनना है।

बेटा! एक सूत्र है और उस सूत्र में यह मन रूपी सेवक कटिबद्ध हो जाता है, एकाग्र बुद्धि होने पर मानव बुद्धिमान क्या योगेश्वर बन जाता है, वह विवेकी बन जाता है। उसे क्रोध अब्रहेः और भी नाना प्रकार की मात्रा नही आती।

जो मानव इस संसार में अपना कल्याण करना चाहता है, अपनी मानवीयता को महान बनाना चाहता है, वह मन रूपी सेवक को प्राण स्थली पर ओतप्रोत करा देता है। हमारे यहां आध्यात्मिक विज्ञानवेता, यहां इस भौतिक विज्ञान के मार्ग को ही जान करके आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। यह मन का जानना। प्राणों को जानना, यह मुनिवरों, देखो, भौतिकवाद है। पंच महाभूत इसी से कटिबद्ध है। मानव इसे जानकर ही आध्यात्मिक वाद में प्रवेश है।

आज का संसार मन की रश्मियों को जानने में ही लगा है। मन की तरंगों में तरंगित होता रहता है। उसी को अपना प्रकाशवत स्वीकार कर लेता है। मन प्रकृति का सबसे सूक्ष्म तन्तु कहलाया गया है, जो बहुत गतिमान है। इस मन को जानने वाला प्रकृति से एक-एक कण को जान लेता है। इसके ऊपर जब योगी का आत्मा बैठ जाता है, तो उस समय यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड का दर्शन करा देता है, और मन को स्वतन्त्र छोड़ने पर कहीं का कहीं रमण करता है। कभी समुद्रों की तरंगों में रमण करता है, तो कभी सूर्य की आभा में लोक-लोकान्तरों में, जहां गति करता है, वहीं निकृष्ट से निकृष्ट गति भी करने लगता है। इस मन पर नियंत्रण से यह मोक्ष की पगडण्डी को धारण कर लेता है। प्रवृत्तियों

पर जब संयम हो जाता है, तो यह मन आत्मलोक में चला जाता है।

मन वायु से भी तीव्र गति वाला है। इस मन को संसार के शुभ कार्य में लगा दो, यह मन तुम्हे इन्द्रलोक तक पहुंचा देगा। इस मन को स्थिर करो। यह तुम्हें बहुत ऊंचा पहुंचा देगा। (790308)

बेटा! यह आत्मा, मन को आज्ञा देता है कि प्रकृति के गर्भ से कुछ लाकर उपस्थित करो।-पूज्यपाद गुरुदेव।

आत्मा-अरे! मन तू ऐसा क्यों है?

मन-स्वामी आपने ही तो आज्ञा दी थी वस्तु उपस्थित करो, मैंने आपकी आज्ञा का पालन करके उपस्थित कर दी।

ओ३म् युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविता धियः। अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्याऽअध्याभरत्॥ यजुर्वेद ११.१

सविता देवता, छन्दः विराडार्ष्यनुष्टुप्, स्वरः गान्धारः, ऋषिः प्रजापतिर्ऋषिः।

पदार्थः जो (सविता) ऐश्वर्य को चाहने वाला मनुष्य (तत्त्वाय) उन परमेश्वर आदि पदार्थों के ज्ञान होने के लिये (प्रथमम्) पहिले (मनः) विचारस्वरूप अन्तःकरण की वृत्तियों को और (धियः) धारणा रूप अन्तःकरण की वृत्तियों को (युञ्जानः) योगाभ्यास और भू गर्भ विद्या में युक्त करता हुआ (अग्नेः) पृथिवी आदि में रहने वाली बिजुली के (ज्योतिः) प्रकाश को (निचाय्य) निश्चय करके (पृथिव्याः) भूमि के (अधि) ऊपर (आभरत्) अच्छे प्रकार धारण करे, वह योगी और भूगर्भ-विद्या का जानने वाला होवे॥

ओ३म् युक्तेन मनसा वयं देवस्य सवितुः सवे। स्वर्ग्याय शक्त्या॥ यजुर्वेद ११.२

सविता देवता, छन्दः शङ्कुमती गायत्री, स्वरः षड्जः, ऋषिः प्रजापतिर्ऋषिः।

पदार्थः हे योग और तत्त्वविद्या को जानने की इच्छा करने हारे मनुष्यो! जैसे (वयम्) हम योगी लोग (युक्तेन) योगाभ्यास किये (मनसा) विज्ञान और (शक्त्या) सामर्थ्य से (देवस्य) सब को चिताने तथा (सवितुः) समग्र संसार को उत्पन्न करने हारे ईश्वर के (सवे) जगत् रूप इस ऐश्वर्य में (स्वर्ग्याय) सुख प्राप्ति के लिये प्रकाश को अधिकाई से धारण करें, वैसे तुम लोग भी प्रकाश को धारण करो॥

अति वृष्टि



मानो देखो, एक समय बिना समय के वृष्टि हो गई। प्रजा में त्राहिमाम् त्राहिमाम् हो गई। ब्राह्मणजनों ने कहा कि हम किसको उपदेश दें, किसके द्वारा ज्ञान की वर्षा करें, क्योंकि यहाँ तो अनावृष्टि हो गई और वैश्यों ने कहा कि हमारी सर्वस्व सम्पत्ति समाप्त हो गई। क्षत्रियों ने कहा कि किसकी रक्षा करें और शूद्रों ने कहा कि हम किसकी सेवा करें, यहाँ तो सर्वस्व समाप्त हो गया। प्रजा में त्राहिमाम् त्राहिमाम् हो गई, तो प्रजा का समूह बना। वह प्रजापति के द्वार पर जा पहुंचे और कहा कि महाराज! हम आपके आसन को पवित्र करने नहीं आए हैं, हम तो अपनी कुछ पुकार लेकर आए हैं, कि हमारा सर्वस्व समाप्त हो गया है, विनाश को प्राप्त हो गए, हमारा जीवन किस प्रकार चलेगा। उन्होंने कहा कि महाराज! बिना समय के वृष्टि हो गई है, हमारी सर्वस्व सम्पत्ति नष्ट हो गई है। प्रजापति ने कहा कि कहो, यह वृष्टि कहाँ से हुई, उन्होंने कहा कि यह वृष्टि मेघों से आई है। अब प्रजापति ने मेघ मण्डलों को निमन्त्रित किया और सभा में नियुक्त किया गया और कहा कि अरे, मेघ मण्डलों! तुम तो बड़े स्वच्छ और पवित्र हो क्योंकि जल का रूप ही सतोगुणी होता है, यह मानव की नाना कामनाओं को भी शान्त कर देता है, यह तुमने क्या किया कि अनावृष्टि करके प्रजा का विनाश कर दिया।

प्रजापति से मेघ मण्डलों ने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो महाराज इन्द्र ने कहा था। इन्द्र ने आज्ञा दी, मैंने वृष्टि कर दी। अब प्रजापति ने मेघों को तो शान्त कर दिया और निमन्त्रण देकर इन्द्र को सभा में नियुक्त किया गया और कहा कि अरे, इन्द्र! यह बिना समय के वृष्टि की इच्छा मेघ मण्डलों को क्यों प्रकट की। उन्होंने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, क्योंकि मुझसे तो मेरी पत्नी शचि ने कहा था। अब प्रजापति ने इन्द्र की पत्नी शचि को निमन्त्रण दिया और उनको सभा में लाया गया। सभा में प्रजापति ने जब यह प्रश्न किया कि हे शचि! तुम तो जगत की माता हो और जगत में भ्रमण करने वाली हो, सांत्वना बना देने वाली हो, क्या कारण है कि तुमने पति को वृष्टि की इच्छा प्रकट की। उन्होंने कहा इसमें भगवन! मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो समुद्रों ने कहा था।

अब प्रजापति ने समुद्रों को निमन्त्रण दिया और सभा में नियुक्त किया गया और उसके पश्चात प्रजापति

ने कहा कि अरे, समुद्रों! यह तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की। उस समय समुद्रों ने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मेरे से तो आदित्य ने कहा था।

मुनिवरों! देखो, अब प्रजापति ने आदित्य को निमन्त्रण दिया और आदित्य से कहा कि तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की है। उन्होंने कहा कि भगवन! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो पृथ्वी माता ने कहा था। अब प्रजापति ने पृथ्वी माता को निमन्त्रण दिया और सभा में लाया गया। प्रजापति ने कहा कि हे पृथ्वी! तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा क्यों प्रकट की। तो पृथ्वी माता ने कहा हे भगवन! मैं क्या करूं? जब यह प्रजा मेरे ऊपर पाप कर्म करने लगती है और जब मैं पाप में सन जाती हूँ, तो उस समय मेरी इच्छा होती है, कि मैं जल में स्नान करूं। तो भगवन! मेरी जो वेदना है, मेरी जो पाप भरी पुकार है, आदित्य तक जाती है, आदित्य नाम सूर्य का है। सूर्य से भगवन! तेज का उत्थान होता है। तेज समुद्रों में जाता है और उसी तेज से जल का उत्थान होता है और उसी से मेघ मण्डल बनते हैं।

मुनिवरों! देखो, जलों का उत्थान समुद्रों से हुआ। उससे मेघ मण्डल बने। शचि नाम विद्युत का है और इन्द्र नाम वायु का है। इन तीनों का जब संघर्ष होता है तो धीमीधीमी वृष्टि होने लगती है। उसी वृष्टि के द्वारा जब कहीं प्रजा में पाप होते हैं, वहाँ अतिवृष्टि हो जाती है और कहीं अनावृष्टि हो जाती है। प्रायः यह होता है प्रजा के कर्मों के द्वारा। तो पृथ्वी माता ने कहा कि भगवन! जब मेघ मण्डलों से वृष्टि होती है, तो उसमें में स्नान कर लेती हूँ और प्रजा अपने लिए हुए पाप पुण्य कर्मों के फल भोग लेती है।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज हमें विचार विनियम यह करना है कि मानव ने यदि अपनी शान्ति के लिए प्रयत्न नहीं किया, मानव जो भी कर्म करता है उसे भोगना अनिवार्य है और भोगा ही जाएगा। आज हम वास्तव में अपने कर्तव्य का पालन करते हुए, अपनी मानवीयता की प्रतिभा को जानते हुए, इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें। हमें आत्मिक शान्ति को विचारना है, क्योंकि आत्मा में शान्ति होना बहुत अनिवार्य है। कल मेरे प्यारे महानन्द जी! जो अपनी कुछ वार्ता प्रकट करेंगे। इनका वाक्य भी बड़ा गम्भीर होता है। कटु तो होता है, परन्तु सत्यता से सना होता है। तो आज का हमारा वाक्य कहता चला जा रहा है, कि हम अपने जीवन को वास्तविक उन्नतशील बनाएं, पवित्र बनाएं, जिससे हम आत्मोन्नति प्राप्त करके परम शान्ति को प्राप्त करते रहें।

अनाशक्ति-मूर्ख कौन



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! एक राजा थे। उनका राष्ट्र बड़ा पवित्र था, राष्ट्र में एक दूसरे का कोई ऋणी नहीं था। एक समय राजा पर्वतों से भ्रमण करते हुए, अपने राष्ट्र में आ रहे थे, तो उनके मन में एक कल्पना जागी, कि अरे, तू इतना महान राजा है, इतनी प्रजा का स्वामी है, किन्तु तेरे द्वारा एक छड़ी भी नहीं, वह अपने राष्ट्र में पहुँचा और शिल्पकारों को बुलाकर कहा, कि तुम मेरे लिए छड़ी बनाओ, जो भुजों में सुशोभित हो।

मुनिवरों! सुना जाता है, कि शिल्पकारों ने करोड़ों मणियों से गूंथ करके, उस छड़ी को बनाया और राजा को अर्पित करते हुए कहा कि लीजिए भगवन! राजा को वह छड़ी बहुत प्रिय लगी।

एक समय वह पर्वतों पर भ्रमण करने के लिए जा पहुँचे। सायंकाल को नगर आ रहे थे, तो उन्होंने देखा कि श्मशान भूमि में एक वैरागी महात्मा है। राजा उसके समीप पहुँचे ओर कहा कि हे महात्मा! तुम यहाँ क्या कर रहे हो? चलो, मेरे नगर में चलो। ऋषि ने उत्तर दिया महाराज! आपके नगर में जो हैं, वह ही एक दिन यहाँ आ जाएंगे, मैं वहाँ जाकर क्या करूंगा। राजा ने सोचा कि यह साधु तो बड़ा मूर्ख है, और साधु से कहा, अरे, साधु! ले इस छड़ी को ले और यह उसको दे देना, जो तुमसे अधिक मूर्ख हो। साधु ने छड़ी को स्वीकार कर लिया, और राजा अपने राष्ट्र में जा पहुँचे।

राजा अपने राष्ट्र का पालन करते रहे और करते करते वह समय आ गया, जब वह मृत्यु शैय्या पर स्थिर हो गए, केवल मृत्यु में कुछ समय रह रहा था श्मशान भूमि में रहने वाले साधु ने अपने योगबल से देखा, कि आज राजा मृत्यु को प्राप्त होने जा रहा है। साधु उस छड़ी को लेकर राजा के समीप जा पहुँचे। राजा ने साधु को दृष्टिगोचर पाया और कहा, अरे, मूर्ख साधु! अभी तक तुमने यह छड़ी किसी को नहीं दी।

साधु ने कहा कि प्रभु! मुझे अपने से मूर्ख कोई मिला ही नहीं, जिसको मैं यह छड़ी देता, परन्तु राजन! अब आप कहाँ जा रहे हैं?

राज ने उत्तर दिया कि मैं बहुत बड़ी यात्रा में जा रहा हूँ, यह प्रतीत नहीं कि मैं जाऊंगा कहाँ।

साधु ने कहा कि राजन! जब आप इतनी बड़ी यात्रा में जा रहे हैं, तो कितनी सेना साथ ले जाएंगे?
राजा ने कहा कि अरे, साधु! मैं तो आपको मूर्ख कह चुका हूँ, अरे, इस अन्तिम यात्रा में यह सेना मेरे साथ नहीं जाएगी।
साधु ने कहा कि राजन! सेना नही ले जाओगे, तो यह मन्त्री तो अवश्य आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए और राष्ट्र की वार्ताओं का निर्णय करने के लिए साथ जाएगा।
राजा ने कहा कि अरे, साधु! तू तो बड़ा मूर्ख है, अरे, इस यात्रा में यह मन्त्री भी साथ नहीं जाएगा।
साधु ने कहा यदि राजन! मन्त्री साथ नहीं जाएगा, तो द्रव्य तो अवश्य जाएगा, क्योंकि आपको खान पान की आवश्यकता है, जिसके लिए धन अनिवार्य है।
राजा अरे, मूर्ख साधु! इस यात्रा में द्रव्य में भी मेरे साथ नहीं जाएगा।
साधु ने कहा पत्नी नहीं जाएगी, तो पुत्र तो अवश्य जाएगा, मोह करने के लिए।
राजा ने कहा अरे, यह भी मेरे साथ नहीं जाएगा।
साधु ने कहा अरे, राजन! पुत्र नहीं जाएगा, तो यह बड़े बड़े गृह, जो आपने बनाए हैं, यह तो आपके साथ अवश्य जाएंगे?
राजा ने कहा अरे, महामूर्ख! यह गृह भी मेरे साथ नहीं जाएंगे।
साधु ने कहा राजन! आप विश्राम करने के लिए, एक आसन तो अवश्य ले जाएंगे?
राजा ने कहा अरे, यह भी साथ नहीं जाएगा।
साधु ने कहा राजन! फिर आपके साथ क्या जाएगा।
राजा ने कहा प्रभु! मेरे साथ कुछ नहीं जाएगा।
मुनिवरों! तब साधु ने छड़ी लेकर राजा पर आक्रमण कर दिया और कहा कि अरे, ले अपनी छड़ी को, मेरे से मूर्ख तो तू है संसार में ओर कौन होता, अरे, आज तक वह कर्म तो किए नहीं, जो तेरे साथ जाते, जो कभी जीवन भर करते रहे, वह यहाँ के यहाँ रह गए। ले, इस छड़ी को स्वीकार कर।
राजा ने साधु के इन वाक्यों का पान किया और कहा प्रभु! मैंने वह कर्म कभी नहीं किए, जो आज मेरे साथ जाते, मुझे क्षमा करो, मैंने आपको सहस्त्रों समय मूर्ख कहा है, प्रभु! मुझे क्षमा करो, मैं महापापी हूँ।
मुनिवरों! देखो, ऋषि बड़े दयालु होते हैं, तथास्तु कह करके अपने आश्रम चले गए और राजा मृत्यु को प्राप्त हो गया। उच्चारण करने का अभिप्राय यह है, कि मानव को वह कर्म भी करने चाहिएं कि जब वह संसार से जाए, तो वह कर्म भी उसके साथ जाएं। इस भौतिक पिण्ड में आकर वह कर्म भी करो, जो कर्म इस पिण्ड को त्यागते समय, तुम्हारे साथ जाएं और आत्माओं में जाकर रमण करने वाले बनो।

वह कौनसा कर्म है?

मुनिवरों! परमात्मा का चिन्तन करना, अपने सदाचार को स्थापित और प्रभु को सर्वव्यापक मानकर कोई पाप न करना। (640418)

गंगा अवतरण



शिव के नाना पर्यायवाची अर्थ होते हैं। परमात्मा को भी है वहीं शिव आत्मा को भी कहा जाता है शिव संकल्प धारण करता है और शिव का पुजारी बनता है, आत्मा अपने प्रभु शिव को पाकर शिव कहलाता है। जिस प्रकार राजा अपनी अपनी प्रजा को ऊँचा बनाने से शिव कहलाता है, ऐसे ही उस प्रभु की गोद में जाने से यह आत्मा शिव कहलाता है। एक शिव और द्वितीय महाशिव होता है। यह आत्मा महाशिव नहीं होता शिव कहलाता है। शिव नाम की नाना प्रकार की औषधियों हैं परन्तु यहाँ शिव नाम केवल पर्वतों का उच्चारण करने में किसी प्रकार का दोषारोपण नहीं होगा क्योकि शिव नाम पर्वतों का कहा गया है। इसी प्रकार महाराजा शिव हम पर्वतों को भी कहते हैं, क्योंकि "गौमुखम् ब्रह्मे" पर्वत में जो ऊपर का भाग होता है उसको जटावासी कहते हैं। "जटाओं में रहने वाला ऊपरी भाग से जो दृष्टिपात आ रहा हो उसी को हमारे यहां जटावासी शिव कहा जाता है।

मेरे प्यारे महानन्द जी ने कई काल में मुझे का "गंगा घृतं ब्रह्मे जल प्रभे कृतानम्"। यह गंगा है। यह महान की जटाओं में रमण करने वाली है। महाराजा सुखमंजस जो सगर के पुत्र थे। जब कपिल ने राजा सगर के साठ हजार मृत्यु के मुखारविन्द में अर्पित कर दिया। तो महाराजा सुखमंजस कपिल मुनि के आश्रम में प्रविष्ठ हुए और महर्षि कपिल जी से कि महाराज! मेरे इस परिवार का कैसे उद्धार होगा? क्योंकि लिए एक बड़ा कलंक है क्योंकि मेरे साठ हजार विधाता मृत्यु के मुखारविन्द मे चले गये। महाराजा कपिल ने कहा, हे राजपुत्र! तुम बड़े नम्र और उदार हो "ब्रह्मे कृतमं प्रभ, 'समयाः ब्रह्मे अश्वतम" काल के पश्चात महाराजा भागीरथ के द्वारा गंगा का अवतरण होगा। जब महात्मा कपिल जी ने ऐसा कहा तो महाराजा सुखमंजस अपने राज्य स्थल को आ गये। महाराजा सगर ने कहा कि कहो सुखमंजस जी! क्या रहा? उन्होंने कहा कि प्रभु! वह साठ हजार सैनिक तो मृत्यु के मुखारविन्द में प्रविष्ट हो गये हैं। कपिल जी ने कहा है कि महात्माओं की अनुपमता विचारणीय होती है। महाराज सगर ने कहा, अच्छा कुछ समय पश्चात उसी प्रणाली में महाराजा भागीरथ हुए जो

आकाश से ब्रह्मपुरी से गंगा को ले आये। परन्तु जब गंगा को लाने का प्रयास किया तो उस गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता था? तो कहा जाता है कि महाराजा शिव के द्वार महाराजा भगीरथ गये और "ब्रह्मे कृत्रम् ब्रह्मे सगरथ च प्रणामे अस्तेः" महाराजा भागीरथ जब इनके समीप पहुँचे, इन्होंने कहा कि प्रभु! गंगा के प्रवाह को कौन शान्त कर सकता है? कहते हैं कि महाराजा शिव न संकल्प के द्वारा गंगा को अपनी जटाओं में अर्पित कर लिया।

शिव जटाओं में अर्पित करने के पश्चात गौमुख के द्वारा इसी गंगा का अवतरण हुआ। मेरे प्यारे महानन्द जी ने मुझे यह लोक कथा वर्णन कराई और कहा कि वास्तव में ऐसा ही स्वीकार किया जाये।

यह जो गंगा का अवतरण है यह केवल पर्वतों से होते हुए मानवीय कल्याण के लिये पृथ्वी के आसन को अलंकृत करती हुई और अपनी प्रतिभा से समाज को सुख देती हुई अपने मार्ग से चली आ रही है।

यह कहा जाता है कि महाराज भागीरथ इस गंगा को पर्वतों से इस महान पृथ्वी मण्डल पर ले आये। गंगा को लाने का अभिप्राय क्या था कि यह संसार सुखी बने, मेरा राष्ट्र सुखी बने क्योंकि वह जहाँ-जहाँ अपनी प्रतिभा को लेते चले गये वही गंगा का प्रवाह पृथ्वी-मण्डल पर आता रहा है। मुझे कुछ ऐसा ही स्मरण है कि राजा सगर की परम्पराओं में उनके साठ हजार पुत्र कहलाये गये हैं। पुत्र क्या उनके यहाँ साठ हजार सेना का समूह रहता था वह सब उनके पुत्र के तुल्य थे। उनको अभिमान की प्रतिभा आ गयी थी जिससे वे नष्ट हो गये। भागीरथ ने पृथ्वी में गड्ढ़े बनाये, निर्माण किया, भागीरथ द्वारा नाना निर्माण करने के पश्चात फिर महाराजा भागीरथ के पुत्र रेणुकान्त राजा हुए, उन्होनें भी यही किया। रेणुकान्त राजा के पुत्र शोभित नाम के राजा हुए वह भी यही कार्य करते थे। उसके पश्चात सुगनात नाम के राजा थे वह भी यहीं करते थे। इसी प्रकार सभी प्राय गंगा को पर्वतों से पृथ्वी पर लाने का प्रयास करते रहे। प्रयास करने का परिणाम यह हुआ कि कुछ काल के पश्चात् भागीरथ की सातवीं प्रणाली में महाराजा सगर जो सौनात नाम के राजा के पुत्र कहलाये जाते थे उन्हें इस गंगा को पृथ्वी पर लाने का श्रेय प्राप्त हो गया। संसार को जलमय आनन्दमय बनाना यह राजाओं का कर्तव्य होता है।

भौतिक गंगा को ही आज मानव अपनी मुक्ति का साधन समझ बैठा है। इस गंगा से तो केवल भौतिक शरीर शुद्ध किया जा सकता है या प्यासे की उसके जल से प्यास शान्त की जा सकती है। मानव का अन्तःकरण तो ज्ञान पूर्वक कर्तव्य से ही पवित्र होगा।

बेटा! एक ज्ञान गंगा है, एक कर्म गंगा है और एक गंगा है। मुनिवरो! हमें तीनों गंगाओं में स्नान करना चाहिए। गंगा महान सुख सागर हैं, इन्हें पीना चाहिए। जिन्हें गंगा, यमुना, सरस्वती भी कहा

जाता है। सरस्वती नाम विद्या और ज्ञान का नाम कर्मकाण्ड का और यमुना नाम उपासना का है। यह तीन हमारे शरीर की गंगा है। जो परमात्मा ने दी है। जो हमारे शरीर में बह रही है। जिनमें स्नान करके हम महान् पवित्र हो जाते हैं। (620407)

गंगा नदी नहीं थी भीष्म की माता, आज ऐसा कहा जाता है कि ब्रह्मा की कृपा से यह गंगा पहले ब्रह्मलोक में बहती थी। उस समय महाराजा इन्द्र ने आठ गन्धर्वों को शाप दे मृत्युलोक भेज दिया। तब इन गंधर्वों ने ब्रह्मा पुत्री गंगा की याचना की थी कि हे माता! आप मृत्युलोक में चलें। वहां हम तेरे गर्भ से जन्म धारण करें। तुम हमारा स्वयं आहार करके उद्धार करते रहना। वे ही आठ गंधर्व माता गंगा के गर्भ से उत्पन्न हुए था गंगशील (भीष्म) की माता वह गंगा नदी थी, जो आज भी पर्वतों से निकलकर मृत्युलोक पर बह रही है, और इसी गंगा नदी का महा शान्तनु के साथ विवाह संस्कार हुआ था। इसने देवकन्या का स्वरुप धारण किया था। संस्कार के समय महाराजा शान्तनु से संस्कार हुआ था कि जो भी मेरा पुत्र होगा, उसका आहार मैं स्वयं कर जाया करूंगी। आधुनिक महाभारत में भी हमारे कथनानुसार ही अंकित है। महानन्द जी! मानव का सिद्धांत होना चाहिए कि सत्य को सत्य मानने में या उसके उच्चारण करने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए। यह गंगा तो जल ही बहा रही है, यह तो सर्वथा जड़ है, चेतना शून्य है, ज्ञान शून्य है। जल कहीं कन्या रूप में आता है, क्या यह हो सकता है? यह तो हो सकता है कि कोई कन्या गंगा नदी में किसी स्थान पर गिर कर बह गयी हो, उसको किसी ने निकाल कर गंगा नाम रख दिया हो, परन्तु जल वाली गंगा नदी देवकन्या बन गयी हो, हम ऐसे वाक्यों को कभी भी मानने को तैयार नहीं, क्योंकि ये परमात्मा की बनायी हुई प्रकृति के सर्वथा विरुद्ध है।

गंगा स्नान से पाप मुक्ति



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

शिवसंकल्प द्वारा शिव की जटाओं से गंगा, शिव नाम परमात्मा का है, तो ये गंगाएं परमात्मा से अहा! परमात्मा की जटाएं क्या हैं, जिनसे ये तीनों गंगा हैं। मुनिवरो देखो, यह जटा नाम वाणी का है, जटा नाम अहा! शिव की जटाओं से जब यह वाणी रूपी महान होती है तो मृत मण्डल, ब्रह्मलोक और अंतरिक्ष लोक में है। ये तीनों गंगाएं सुख का सागर है। आज हमे विद्यार्थी बन करके करके, हमें वास्तव में संसार सागर से पार होना चाहिए। हमारे आने का उद्देश्य यही है कि हम उन गंगाओं को जान से परमात्मा ने हमारे लिए नियुक्त की हैं। अहा! परमात्मा। परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में, यह कैसी गंगा उत्पन्न की महानन्द जी ने एक समय प्रश्न किया कि यह जो गंगा है। ब्रह्मा की पुत्री कही जाती है। क्योंकि जो वाणी होती है, वह इसके अधीन होती है, और जो जिसके अधीन होता है, वह उसके बालक के तुल्य होता है। इसलिए बतलाया कि यह जो वेदवाणी है, शिव की जटाओं से उत्पन्न हुई है। ब्रह्मा के कमण्डल से आयी है, यह ब्रह्मा की पुत्री है। ब्रह्मा नाम बुद्धिमान का है और जिसकी वाणी जिसके शासन में हो, उसको ब्रह्मा कहते हैं। जिससे इन तीनों गंगाओं की उत्पत्ति हुई है, जिसको गंगा, यमुना और सरस्वती कहते हैं।

जब हम ब्रह्मा के कमण्डल के पास जाते हैं, तो वह कितना पवित्र है जिससे गंगा अवतरित होती है जिस गंगा में स्नान करके मानव आध्यात्मिकता से परिपक्व होता है। आचार्यों का एक वचन प्राप्त होता है कि सृष्टि के आदि में जब यह संसार रचा गया तो यह गंगा ब्रह्मा के कमण्डल में विराजमान थी। यहां संसार को तरण-तार करने वाले आदि आचार्यों ने शिव की उपासना और आराधना आराधना करते हुए उनकी भावना ब्रह्मलोक जा पहुंची जहा द्वारा यह गंगा उनके कमण्डल में विराजमान थी। आज हमें नारद की एक आलंकारिक रूपों में वार्ता कण्ठ आ गई है। देखो, एक समय सब प्रजा अपने कर्मों की मर्यादा को ऊँचा न बना करके गंगा स्नान को चली जा रही थी। मार्ग में नारद मुनि विचर रहे थे। देव ऋषि नारद ने प्रजा से कहा हे प्रजाओं! आज तुम कहाँ चली जा रही हो? उन्होंने कहा कि महाराज! आज हम गंगा स्नान को जा रहे है। क्यों? आज जीवन में जो पाप किए है, उन

सबको गंगा को अर्पण करेंगे। अहा! नारद ने सोचा अरे, गंगा तो बड़ी पापिनी है जो प्रजा के सभी पापों को एकत्रित कर लेती है और पाप एकत्रित करती चली जा रही है।

नारद मुनि गंगा के द्वारा जा पहुंचे, गंगेति गंगोत्र भस्तमम् गंगा से कहा कि तुम बड़ी पापिनी हो। तुम्हारे द्वारा प्रजा के सर्व पाप एकत्र हो गए है। गंगा ने कहा कि महाराज! यह पाप मेरे द्वारा नहीं है। मैं जो समुद्रों को दे देती हूँ। समुद्र उनको आकर्षित कर लेता है। नारद मुनि ने सोचा यह पाप तो गंगा के द्वारा न रहकर समुद्रों के द्वारा है।

नारद मुनि वहाँ से समुद्रों के द्वार जा पहंचे और कहा कि हे समुद्रों! तुम तो बड़े पापी हो। तुम्हारे द्वारा तो बड़े पाप एकत्रित हो रहे है। प्रजा के सब पाप गंगा तुम्हें दे देती है। अहा! समुद्रों ने कहा कि यह पाप हमारे द्वारा नहीं है। हम पापों को एकत्रित करते। इन सब पापों को, जब सूर्य से तेज आता है, तो इसके जलों का उत्थान होता है। यह सब पाप हम मेघों को दिया करते हैं।

नारद मुनि मेघों के द्वार जा पहुंचे, और मेघों से कहा कि अरे, मेघो! तुम बड़े पापी हो। इस प्रजा के सब पाप तुम्हारे द्वारा एकत्रित हो रहे हैं। मुनिवरों! देखो, उन मेघो ने कहा कि अरे, तुम कितने भोले हो। यह पाप मेरे द्वारा क्यों होते। मैं इन सब पापों की वृष्टि कर देता हूँ, और सब वृष्टि रुप बनकर के देखो, प्रजा के द्वार पहुंच जाते हैं।

मुनिवरों! देखो, इस वाक्य को विचारना चाहिए। देखो, सब पाप प्रजा के द्वार चले गए हैं। आज मानव मर्यादा को न जानकर पापों को करता चला जा रहा है। कर्मों की मर्यादा को न जानकर, गंगा के स्नान को जा रहा है परन्तु मानव ने गंगा स्नान का रहस्य नहीं जाना। आज मानव को अपनी मर्यादा विचारनी चाहिए, और मर्यादा में चलना चाहिए। यदि मानव के द्वारा मर्यादा है, तो जीवन है, अन्यथा संसार में मानव का जीवन ही नहीं। जिस राष्ट्र में मर्यादा है वह राष्ट्र है, और जिस राष्ट्र में मर्यादा नहीं वह राष्ट्र भी बेटा! संसार में न होने के तुल्य है। उनमें नाना प्रकार की आपत्तियां हैं। जैसा मेरे प्यारे! महानन्द जी! कहते चले जा रहे है कि आज का राष्ट्र आपत्तिजनक बन रहा है परन्तु हम गौरव के सहित नहीं कहते, हम तो यह कह रहे हैं कि यह संसार क्यों न अशान्ति वाला बनेगा जब संसार की मर्यादा ही पृथक हो चुकी है। जब संसार में अपनी संस्कृति का प्रतीक समाप्त हो चुका है, उसे शान्त करने के लिए जा रहे हैं। शान्ति उसी काल में आएगी, जब इनके द्वारा मनोमय कोष में हो करके, अपने हृदय को पुष्टिकारक बनाने के लिए, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाने के लिए, हर प्रकार से ऊँची से ऊँची योजना बनाने से पूर्व, अपने मन की योजना को ऊँचा बनाया जाएगा। (620106)

गऊ दुग्ध आहार से विवेक की उत्पति



गऊ के दुग्ध का महत्व

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही उन मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है और जितना भी यह जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमे दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वह परमपिता परमात्मा दृष्टिपात आते रहते हैं। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी और मानवीयतव में वह सदैव निहित रहने वाले हैं। आज हम उस परमपिता परमात्मा की महती का जब गुणगान गाना प्रारम्भ करते हैं, तो प्रायः हमे ऐसा दृष्टिपात आने लगता है। जैसे हम परमपिता परमात्मा की अनन्तमयी ब्राह्मण्ड की आभा में सदैव निहित हैं, और हम अपने में आनन्दित होना प्रारम्भ होने लगता है और यह विचारने लगते हैं कि वह परमपिता परमात्मा अनन्तमयी है, जिसकी आभा में सदैव रत्त रहता है। तो वेद का मत्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा का वर्णन कर रहा है अथवा उसके गुणों का वर्णन कर रहा है, इसीलिए हमे प्रत्येक वेदमन्त्र के ऊपर अन्वेषण करना चाहिए और अनुसन्धान करना चाहिए जिससे हम ज्ञान और विज्ञान की अनुपम धारा में रत्त हो करके उस परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त हो जाए और उसके ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा में सदैव रत्त हो जाएं। आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा वेदमन्त्र मानो देखो, उसी आभा में हम वेदमन्त्र की विचित्रताओं में सदैव रत्त रहते हैं, क्योंकि एक एक वेदमन्त्र में संसार का सर्वत्र ज्ञान और विज्ञान निहित रहता है मानो देखो, भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान ये मानवीयता का एक मौलिक रूप अवृत्तियों में रत्त रहा है और यह विचारता रहा है कि हम इस ज्ञान और विज्ञान में सदैव रत्त हो जाएं। और ज्ञान और विज्ञान की प्रतिभा में जब रत्त हो जाएं तो मानो हम ब्रह्माण्ड में अपनी आभा में रत्त हो करके और उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को जानते हुए इस सागर से पार हो जाएं। क्योंकि प्रत्येक मानव का एक ही कर्तव्य रहा है एक ही मन्तव्य रहा है कि हम इस सागर

से पार हो जाएं जो नाना प्रकार के मान और अपमान वाला जगत है यहां किसी का मान हो रहा है तो किसी का अपमान हो रहा है वही मानव अपमानित हो रहा है वही मानव महानता में परिणत हो रहा है बेटा! देखो, इसी आभा में वेदमन्त्रों के ऊपर जब मानव प्रवेश करता है और वेदमन्त्रों के गर्भ में जाता है तो वेदमन्त्र परमपिता परमात्मा का यह जो यह अनूठा ज्ञान और विज्ञान है। यह यही कहता है हे मानव! तू इस सागर से पार हो जो मान अपमान वाला जगत है, इससे तू पार हो तो ऐसा बेटा! मानो देखो, वेद का मन्त्र कहता है, जितने भी मन्तव्य वाले हैं आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता हो उनका सभी का एक ही मन्तव्य रहा है।

महर्षि दाल्भ्य मुनि संहिता में गऊ

तो आओ मेरे प्यारे! आज मैं इस सन्दर्भ में तुम्हे ले जाना नही चाहता हूं। क्या मानव बिना ज्ञान और विवेक के इस सागर से पार नही हो सकता। तो मुनिवरों! देखो, हमने इससे पूर्व काल में कुछ वेदमन्त्रों का अध्ययन ऐसा चल रहा है क्योंकि हमने कुछ समय से दालभ्य ऋषि संहिता का प्रारम्भ हो रहा है। मानो दालभ्य ऋषि की जो शाखा है, वह संहिता एक उपराब्ध कहा गया है इसीलिए हम सदैव उस शाखा में रमण किया करते हैं जहां उन्होंने जहां गऊ के ऊपर अपना विचार विनिमय दिया और एक एक वेदमन्त्रों में गऊ के बहुत से पर्यायवाची शब्दों की विवेचना की है।

गऊ के लिए सर्व सम्पदा का त्याग

परन्तु देखो, हमारे यहां आज के वेदमन्त्रों में कामधेनु गऊ का वर्णन आ रहा था मानो देखो, यहां संसार की सर्व सम्पदा को मानो त्याग देता है परन्तु जब उसे गऊ प्राप्त हो जाती है तो गऊ को वह नही त्याग पाता मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है। एक समय महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज जब ब्रह्म ज्ञान में जाने के लिए तपश्चर हो रहे थे और तपस्या कर रहे थे तो महाराजा इन्द्र के यहां त्रिपुरी में बेटा! एक याग हुआ अश्वमेध और वह अश्वमेध याग में बेटा! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने बेटा! अनुष्ठान भी किया हुआ था उसके पश्चात भी जब उन्हे निमन्त्रण आया तो वह महाराजा इन्द्र के यहां पंहुचें तो महाराजा इन्द्र ने कहा आईये ब्रह्मर्षि जी तो वह ब्रह्मवेत्ता होते मानो उस स्थली पर विद्यमान मेरे प्यारे! देखो, महात्मा से उन्होंने कहा राजन हे महात्मन्! आप मेरी इस त्रिपुरी राष्ट्र का पालन कर सकते हो अथवा नही मैं राष्ट्र को आपको प्रदान करना चाहता हूं महर्षि वशिष्ठ ने कहा क्या मैं इसको नही चाहता क्योंकि मुझे राष्ट्र की आवश्यकता है। उन्होंने कहा भगवन क्यों नही है और मुझे क्यों है और आपको क्यों नही है। तो महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि आपको तो इसीलिए क्योंकि आप इस वित्त को चाहते हैं इस राष्ट्र और सम्पदा को चाहते हैं और ब्रह्मज्ञानी जो होता है उसको विशेष सम्पदा नही चाहिए वे सम्पदा से रहित होगा तो ब्रह्मज्ञानी बन जाएगा और यदि देखो, राजा सम्पदा को चाहता हुआ वह आगे ऊर्ध्वा में राजा बनेगा देखो, जितना भी द्रव्यपति के द्वारा

आचरण मानो महान बनता रहेगा। मानो कुशल में महान बनता रहेगा उसमें वह महानता में परिणत होता रहेगा। तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो वर्णन करते हुए ब्रह्मणे व्रतं तो उन्होंने कहा तो प्रभु! आप यह राष्ट्र नही चाहते आओ, याग में याग करेंगें बेटा! याग करने लगे जब याग करने लगे तो स्वर्ण से मथा हुआ मानो देखो, एक रथ उन्हे प्रदान किया और उन्हे कहा प्रभु! लीजिए। उन्होंने कहा मैं इस दक्षिणा को नही चाहता मैं यह दक्षिणा नही चाहता हूं, भगवन! तो इन्द्र ने कहा तो प्रभु! क्या चाहते हो, तो आओ भगवन देखो, अन्नं ब्रव्हा उन्होंने अन्न का पान कराने लगे तो ऋषि ने राजा से कहा प्रभु! मैं राष्ट्र का अन्न भी ग्रहण नही करता उन्होंने कहा क्यों नही करोगे उन्होंने कहा कि राष्ट्र का जो अन्न है वह रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ होता है, इसीलिए मैं इसको ग्रहण नही करूंगा। राजा ने कहा तुम्हे प्रतीत है कि मेरे राष्ट्र में जो द्रव्य है, वह बड़ा पवित्र है और पवित्र अन्न को भी आप नही पान करना चाहते मानो अन्न भी पवित्र उन्होंने कहा प्रभु! अन्न कैसा है मैं स्वयं और मेरी देवी जो है शचि दोनों हम मिलन करके मानो अपना कृषि उद्गम करते हैं और कृषि के अमृतं जो पृथ्वी माता वसुन्धरा जिस अन्न को प्रदान कर देती है। हम गऊ को दुहने वाले मानो देखो, गो नाम पृथ्वी का है और गो को हम दूहते रहते हैं। मानो उसमें नाना प्रकार के बीज की स्थापना करें और वही अन्नाद बन करके माता वसुन्धरा हमे प्रदान कर देती है तो मानो वह अन्न हम अपने में पान करते रहते हैं तो इसीलिए हमारा अन्न पवित्र है इसे पान कीजिए महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले कि हे प्रभु! यह अन्न तुम्हारा पवित्र हो सकता है। परन्तु इस अन्न पे मेरा अधिकार नही अपना अधिकार नही चाहता हूं कि मेरा अधिकार है। प्रभु! यह आपका है उन्होंने कहा प्रभु! मेरे द्वारा आप अतिथि हैं। आप मेरे पुरोहित हैं ब्रह्मवेत्ता है उन्होंने कहा सम्भूति ब्रह्मा मेरे प्यारे! वह उन्होंने नही स्वीकार किया अन्त में बेटा! उन्होंने नाना द्रव्य दिए अश्व दिए उसको भी उन्होंने त्याग दिया परन्तु अन्त में कामधेनु गऊ उन्हें प्रदान कर दी और जब वह गऊ उन्हें प्रदान कर दी तो बेटा! गऊ को ले करके बड़े प्रसन्न हुए उन्होंने कहा ऋषि राजा ने कहा प्रभु! यह कामधेनु तो स्वीकार कर सकते हैं।

गऊ के दुग्ध से विवेक की उत्पति

उन्होंने कहा अमृतो ब्रह्मणा गो वर्णसुता क्योंकि गो को ले करके कौन प्रसन्न नही होगा, इसे मुझे प्रदान किजीए भगवन! मैं इसे स्वीकार करूंगा। मेरे प्यारे! देखो, गो को ले करके कामधेनु को और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने महाराजा इन्द्र के यहां से बेटा! देखो, प्रस्थान किया परन्तु देखो, गमन करते समय इन्द्र ने यह कहा प्रभु! यह देवताओं की धरोहर है, उन्होंने कहा प्रभु! इसको तो हमने स्वीकार कर लिया है। मेरे प्यारे! देखो, गऊ को ले करके अपने आश्रम में आ गए और आश्रम में माता अरूणधति ने कहा प्रभु! यह क्या है? उन्होंने कहा महाराजा इन्द्र के यहां से यह कामधेनु हमे

प्राप्त हुई है इसका नाम कामधेनु है और यह गऊ है और इस गो का हमे पालन करना है इसके दुग्ध को आहार करके हमे योगाभ्यास करना है। मानो इससे हमे विवेक उत्पन्न होगा मुनिवरों! देखो, महात्मा ने उस गऊ को स्वीकार कर लिया मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार हमारे यहां गो नाम के पशु का बड़ा वर्णन आता रहता है राजा बेटा! देखो, जब भी किसी भी अमृतां बेटा! देखो, गऊओं की रक्षा करने में राजा लगा रहता है। क्योंकि राजा के राष्ट्र में जितना पशुधन होगा और गो नाम का पशुधन होगा उतना ही मुनिवरों! देखो, राजा का राष्ट्र पवित्र होगा और महान बनेगा, क्योंकि देखो, यह जो पशु है गो नाम का पशु है ये राष्ट्र के लिए समाज के लिए मानो लाभप्रद है। इसके दुग्ध का आहार करने से मानव की बुद्धि प्रबल बनती है और मानव की बुद्धि में महानता का दर्शन होने लगता है मेरे प्यारे! देखो, यही तो इन्द्रियों का यही तो मानो देखो, बाह्य जगत की गो है वही आन्तरिक जगत में बेटा! इन्द्रियां बन करके मानो देखो, ज्ञान की आभा ही गो कहलाई जाती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने बेटा! बहुत से उपदेश दिए। और गऊ के सम्बन्ध में यह भी कहा जाता है। गो ब्राह्मण जो ब्रह्मवेत्ता होते हैं उन्हे गऊओं को प्रदान किया जाता है और याग में मानो यह कहा जाता है, हे ब्रह्मण! जितना भी राष्ट्र में ब्राह्मण होगा बुद्धिमान होगा और विवेकी होगा उतना ही मानो देखो, राष्ट्र ऊंचा बनता रहेगा और मुनिवरों! देखो, वह बनेगा जब ही जबकि देखो, गो का दुग्ध आहार करने वाला मेरे प्यारे! देखो, गो वर्णसुतं मुझे स्मरण आता रहता है।

भगवान कृष्ण द्वारा गऊ दुग्ध का आहार

जब मैं द्वापर के काल में आता हूं तो एक विचित्र मुझे दृश्य आता रहता है। बेटा! जब भगवान कृष्ण के यहां गऊओं के दुग्ध का समय होता तो उनकी मानो ध्वनि होती और वह बंसुरी की जब ध्वनि होती तो सर्व गऊएं अपना दुग्ध देने के लिए प्रसन्न युक्त हो जाती मेरे प्यारे! वह प्रसन्नता जब गऊ में हो जाती है। उस दुग्ध का आहार करने से मानव की साधना पवित्र होती है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि यह कहता है आचार्य जनों ने यह कहा है कि गऊ के जब उदर में भोजन नही होगा उदर में जब तृण नही होगा तो मानो देखो, वह प्रसन्न नही होगी और मुनिवरों! देखो, जब गऊ मानो देखो, आहार पान करते हुए वह अपने उदर में पूर्णता को प्राप्त होती है तो वह ध्वनि आते ही वह प्रसन्न हो जाती है मेरे प्यारे! देखो, हमारे यहां जितने महापुरुष हुए हैं। उन्होंने गो धन का बड़ा अपने में मानो देखो, यह स्वीकार किया कि गो होनी चाहिए, और गो का दुग्ध आहार करना यह अमृतं।

माता कौशल्या द्वार गऊ के दुग्ध का आहार

मेरे प्यारे! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है जब मैं देखो, त्रेता के मानो द्वां ब्रहे उस काल में प्रवेश करता हूं जब मुनिवरों! द्वापर में तो कृष्ण जी की ये चर्चाएं रहीं परन्तु त्रेता के काल में भगवान राम

का जीवन भी ऐसा रहा है मेरे पुत्रों! देखो, जब राम का जन्म हुआ और माता कौशल्या ने यह स्वीकार कर लिया था कि मैं राष्ट्र का अन्न नही ग्रहण करूंगी तो मानो देखो, मुझे उस आहार को पान करना है जिससे त्याग और तपस्यामयी पुत्र का जन्म हो जाए तो मानो देखो, उस समय वह अपने आचार्य के समीप पंहुची जब आचार्य के समीप पंहुची तो उनके आचार्य तत्त्ववेतु ऋषि महाराज थे और तत्त्व ने कहा कहो पुत्री! तुम्हारा आगमन उन्होंने कहा प्रभु! मैं इसीलिए आई हूं मैंने यह प्रतीज्ञा की है कि मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नही करूंगी जब महात्मा श्रृङ्गी मानो देखो, अपने आसन पर याग किया और पुत्रेष्टि याग करके यह प्रतीज्ञा कराई कि मानो मैं गो धन्नं ज्ञनं ब्रहा तुम राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नही करो तुम्हे दुग्धाहार करना होगा गो वर्णसुतं मानो देखो, उन्होने मुझे अमृतां वर्णन किया तो प्रभु मुझे गो चाहिए मैं गुरु के द्वार पर आई हूं। उनके यहां बहुत सी गऊएं थी जो मानो देखो, प्रसन्न हो करके दुग्धा अप्राहण करती रहती मेरे प्यारे! उन्होंने गऊ उन्हे प्रदान की और गऊ ले करके माता कौशल्या अपने कक्ष में आ गई मानो देखो, उसकी सुरक्षा और सेवा करना यह उनका कर्तव्य बन गया मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है वे गो की कितनी प्रशंसा करती रहती मानो उनके श्रोत्रों में यह उच्चारण करती रहती, हे गोधन! मानो देखो, तू धन तू मेरे जीवन की सम्पदा है। मानो तू प्रसन्न हो और प्रसन्न हो करके मुझे दुग्धाहार करा जिससे मैं मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बालक सदैव प्रसन्न रहे। अपने जीवन में महानता को प्राप्त करता रहे।

माता सीता द्वारा गऊ दुग्ध का आहार

मेरे प्यारे! देखो, वह उसका दुग्धाहार करती रहती मेरे प्यारे! देखो, यही गो की प्रशंसा महर्षि बाल्मिकी के आश्रम में होती रही बेटा! देखो, जब भगवान राम ने क्योंकि अयोध्या में यह नियम बन गया था बहुत पुरातन काल से ही जो भी राष्ट्र गृह में राजलक्ष्मियों के सन्तानों का जन्म होगा वह भयंकर वनों में आयुर्वेदाचार्यों के गृह में होगा तो मानो देखो, आचार्य गृह में जब वह मानो देखो, महर्षि बाल्मिकी क्योंकि आयुर्वेद के और वह वनस्पति विज्ञान के बड़े विशेषज्ञ थे मेरे पुत्रों! जब उनको दृष्टिपात करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा, तो मुनिवरों! देखो, बड़ा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न होता है, जब माता सीता को वहां त्यागा गया तो मुनिवरों! देखो, वह गऊ दुग्धाहार करते रहे और उसको पान करने से मुनिवरों! देखो, ऋषि मुनियों के यहां वह गऊओं का गोधन रहता और उसे पान करते ही मुनिवरों! देखो, माता सीता बड़ी प्रसन्न होती मेरे प्यारे! देखो, यही ब्रव्हे कृतं गो अमृतां पान किया तो मुनिवरों! देखो, गर्भ का बाल्य ऊंचा बना सीता ने भी वही पालन किया मेरे पुत्रों! देखो, नाना प्रकार की वनस्पतियों को पान कराया और उस दुग्ध का आहार करना मुनिवरों! देखो, वह महानता को प्राप्त हो गए। तो परिणाम मैं आज विशेष विवेचना नही दूंगा इस सम्बन्ध में विचार यह देने के लिए कि गो नाम के पशु का जितना मानो उसका मान उसकी आदरणीयता मानवीय हृदयों में सदैव समाहित

रही है। जिसको जान करके बेटा! मानव बड़ा प्रसन्न रहा है महर्षि बाल्मिकी के जीवन को जिन्होंने बेटा! दृष्टिपात किया है वह जानते है कि उनके यहां गऊ के दुग्ध का आहार करने वाले ब्रह्मचारी आहार करते हुए मुनिवरों! देखो, वह सदैव अस्त्रों शस्त्रों में तत्पर हो गए और वह बुद्धिमता से मानो उन शस्त्रों की विद्या को पान करते रहे तो मेरे पुत्रों! विचार आता रहता है मैं बेटा! बहुत दूरी चला गया हूं। विचार देता हुआ क्या महाराजा इन्द्र के यहां एक कामधेनु गऊ उन्हे प्राप्त हुई और कामधेनु जब उन्होंने प्रदान कर दी उन्होंने कहा यह कामधेनु गऊ है यह कामना की पूर्ति करने वाली है। तो मेरे प्यारे! महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में नाना ब्रह्मचारी अध्ययन करते रहते थे तो बेटा! वह कामधेनु तृप्ति करती, तो मेरे प्यारे! देखो, वह तपश्वर है वह भयंकर वनों में परमात्मा की दी हुई वनस्पतियों का अध्ययन करना और वह दुग्धों का आहार करके मुनिवरों! अपनी साधना में परिणत होना और गो नाम की इन्द्रियों से उस मानो गो नाम के पशु का जो तरंगेवाद है, मानो देखो, उससे गो इन्द्रियों से समन्वय करते रहना जब दोनों का मिलान होता रहा तो साधना प्रायः देखो, अपने में साधक बन करके साधना में परिणत हो जाता। तो आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हे कहां तक यह वार्ता प्रगट करूं कि हमारे यहां परम्परागतों से ही गो नाम के पशु का कितना मानो देखो, अमृतं हृदयों में देखो, हृदय ग्राही रही है। तो उसे हमे विचारना है आओ मेरे पुत्रों! देखो, मैं जब गो की चर्चा करता हूं, तो ऋषि राज नही चाहता सम्पदा नही चाहते दिव्या नही चाहते परन्तु वो क्या चाहते हैं कि गो का मिलन हो जाए और गऊ हमे प्राप्त हो जाए उसका दुग्धाहार करके ही मानो देखो, हम अपनी इन्द्रियों को पवित्र इन्द्रियों को अनुशासन में ला सके जिससे हमारी अन्तरात्मा का मिलान उस परमपिता परमात्मा से हो जाए, तो मेरे प्यारे! देखो, यहां गो नाम के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं। गो नाम के पशु की बड़ी प्रशंसा की आचार्यों ने और देखो, उसको अहा स्वीकार करने में वह मानो सदैव तत्पर रहे हैं। तो विचार आता रहता है बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है। गो वर्णनं ब्रह्मा गो वर्णसुतं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, यह गो नाम का जो दुग्ध है आहार करने मानव के हृदय से स्वर्ण की मात्रा उत्पन्न हो जाती है, तो स्वर्णतव बन जाता है मेरे प्यारे! वह जो स्वर्णमयी है वह मानव की बुद्धि को विकसित बना देता है और वह इन्द्रियों पर संयम करता हुआ, वही मानव मेधावी बन जाता है वही ऋतम्भरावी बन जाता है वही प्रज्ञावी बन जाता है, वह प्रज्ञ हो जाता है, जैसे परमपिता परमात्मा प्रज्ञ कहलाते हैं इसी प्रकार यह मानव भी प्रज्ञ बन जाता है और प्रज्ञ बन करके मुनिवरों! देखो, परमपिता परमात्मा की महती में सदैव रत्त हो जाता है। आओ मेरे प्यारे! देखो, मैं बहुत दूरी न चला जाऊं विचार केवल यह कि मुनिवरों! देखो, मुझे स्मरण आता रहता है।

माता मल्दालसा द्वारा गो दुग्ध का आहार

माता मल्दालसा का जीवन माता मल्दालसा का जीवन जब स्मरण आता है तो वह गो रस को पान

करती वह गो दुग्ध को ही पान करती रहती मेधावी बुद्धि बन जाती मेरे पुत्रों! देखो, वह गो वर्ण ब्रह्मा वह गोरसों का पान करती माता मल्दालसा अपने पुत्रों को ही गर्भस्थल में बेटा! वह ब्रह्मवेत्ता बना देती है हे ब्रह्मणे ब्रहा हे अमृतों को पान करने वाले! हे माता! तू अपने गर्भस्थल में अपने पुत्र को अपने गर्भ में ब्रह्मवेत्ता बना सकती है। परन्तु दोनों गऊओं का मिलान होना चाहिए, तेरी जो नाना प्रकार की तरंगे रूपी गो हैं और देखो, बाह्य जगत में जो गो नाम का पशु है उसके जो दुग्ध में जो माता मानो गऊ के प्रति जो तरंगे आती हैं। उन तरंगों का जब मिलन होता है वही तरंगे मानो देखो, बाल्य की इन्द्रियों का निर्माण करती रहती हैं। उन्हीं तरंगों से मानव की बाल्य माता के गर्भस्थल में मानो देखो, बुद्धि का निर्माण होता रहता है और वही जो निर्माण है वह निर्माणवेत्ता तो परमपिता परमात्मा परन्तु तरंगे कहीं से आती हैं और उन तरंगों का तरंगों से मिलन हो जाता है वह तरंगें शान्त हो जाती हैं परन्तु जब वही बाल्य बाह्य जगत में आता है। तो मुनिवरों! देखो, उसका बाह्य जगत बन करके जब विकसित होता है तो वही तरंगे मेरे पुत्रों! देखो, कार्य क्रियाकलापों में तत्पर हो करके उसकी बुद्धि को प्रखर बना देती है ब्रह्मवेत्ता बना देती है।

गो कहते हैं दुहने को

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा तुम्हे प्रगट नही करूंगा विचार विनिमय क्या है बेटा! गो नाम इन्द्रियों का बेटा! गो नाम के पशु को तो माना ही गया है परन्तु देखो, जब गो नाम जब पृथ्वी को माना जाता है यह वेद इसे वसुन्धरा कहता है और गो भी कहता है बेटा! गो नाम का ब्रह्मणे व्रतं यह माता वसुन्धरा ही तो देने वाली है इसके गर्भ में नाना प्रकार का खाद्यान्न मानो तपायमान हो रहा है, अपने में पान करने वाला अपनी आभा को प्राप्त कर रहा है हे माता! तुझे वेद ने गो कहा है हे माता! तुझे गो कह करके वर्णन किया है तू नाना प्रकार के मानो देखो, तुझे कृषक धुने लगता है तेरे गर्भ से नाना प्रकार के खनिजों को जान करके खाद्यान्नों को जान करके, विज्ञान को जान करके, विज्ञान वेत्ता बन करके ऊर्ध्वा को प्राप्त हो जाता है। मेरे प्यारे! विचार आता रहता है मैं विशेष चर्चा तो तुम्हे देने नही आया हूं, विचार केवल यह कि गो नाम बेटा! हमारे यहां वैदिक साहित्य में वेद के मन्त्रार्थ में जहां गो नाम माता का है। गो नाम पृथ्वी का है बेटा! इसको कृषक दुहता है, समय समय पर और इसके गर्भ से नाना प्रकार का खाद्यान्न उपज में लाता है और यह माता देने वाली है करूणामयी देती है इसी प्रकार मेरे प्यारे! गो नाम रात्रि को भी माना है। हे रात्रि! तू गो कहलाती है जब शान्त मुद्रा में मानव परिणत होता है उस समय रात्रि रात्रि रूपी मानो जो गो है, उसको कौन दुहने वाला है बेटा! साधक दुहने वाला है साधना कर रहा है शान्त मुद्रा में शान्त वातावरण है और माता मानो उसके अन्धकार को दुहने वाला मानो चन्द्रमा माना गया है वह चन्द्रमा उसे दुहता रहता है। उसके अन्धकार से उसकी ध्वनि का मिलान करता हुआ मेरे पुत्रों! देखो, मिलन करता हुआ वही चन्द्रमा

अमृत देता है। वही चन्द्रमा अमृत दे करके बेटा! रात्रि रूपी अहिल्या के अमृतां मानो देखो, यहां अहिल्या का वर्णन नही आ रहा है मेरे प्यारे! देखो, इसको वैज्ञानिक दुहता है इसको मेरे पुत्रों! देखो, माता की यह कामना होती है, पितरों की कामना होती है कि देखो, हम एको बहुधा बन जाए तो मेरे प्यारे! देखो, इस चन्द्रमा से देखो, रात्रि रुपी श्रृङ्गार को जो भोगने वाला है। भोगतव्य बन रहा है चन्द्रमा का मिलान समुद्रों से होता है समुद्रों से आपो ले करके मानो देखो, वही रस बन करके देखो, वनस्पतियों में प्रवेश होता है और उन्हीं वनस्पतियों को अन्नाद को और खनिज को पान करते हुए बेटा! देखो, मानव के शरीर में एक रसाभरण हो जाता है माता के शरीरों में एक रसाभरण हो जाता है देखो, उसके पश्चात माता पिता देखो, पुत्र याग करते हैं और पुत्र याग करके बहुधा की जब कामना जागती है। एको बहुधा की जब उग्रता आती है तो बेटा! सन्तानों का जन्म हो जाता है। तो बेटा! मैं बहुत दूरी जाना नही चाहता हूं विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! देखो, यह जो गो नाम का रस है जिसका कोई अमृतां ब्रह्मणे व्रतं बेटा! देखो, बाह्य जगत में भी गो आन्तरिक जगत में भी गो कहलाती है और देखो, रात्रि और नाना पर्यायवाची शब्द हैं। तो मुनिवरों! देखो, हमे गो नाम के पशु को देखो, हमे रक्षा उसकी करनी चाहिए और गो नाम माता का पालन करना चाहिए और मुनिवरों! देखो, गो नाम पृथ्वी को दूहना चाहिए जिससे यह नाना प्रकार का खाद्यान्न के द्वारा रसों को हमे प्रदान करने वाली हो मेरे प्यारे! देखो, मैं बहुत दूरी चला गया हूं। विचार देता देता विचार यह चल रहा था कि महाराजा इन्द्र के यहां से महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज को कामधेनु प्राप्त हुई बेटा! देखो, वह जो कामधेनु है वह कामधेनु मानो कामना की पूर्ति करने वाली है, बेटा! वह जब वह कामं ब्रव्हे कृतं कामना क्या है ऋषि के अन्तर्हृदय में यह जागरूकता आई की मैं साधक बनू, मैं ब्रह्मवेत्ता बन जाऊं मैं ब्रह्मवेत्ता बन करके ही मानो कुछ प्राप्त कर सकता हूं उसके दुग्ध का आहार करना। मेरे पुत्रों! देखो, यहां वायु को भी गो माना गया है वायु को भी गो कहते हैं साधक मेरे पुत्रों! देखो, जब इस स्थूल गऊ को त्याग देता है और इन्द्रियों पर जब संयम हो जाता है तो बेटा! यह शीतली प्राण के द्वारा देखो, वायुमण्डल वायु को सिञ्चन करता हुआ देखो, अन्तरिक्ष से पोषक तत्त्वों को ग्रहण करने लगता है। मेरे पुत्रों! देखो, वह जब उसे अपने में ग्रहण कर लेता है महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने बारह वर्ष का यह अनुष्ठान किया था क्या वह मुनिवरों! देखो, रसना के द्वार से वह अन्तरिक्ष से ही मुनिवरों! देखो, वह वायु से ही मुनिवरों! देखो, वह पोषक तत्त्वों को ग्रहण करते रहे और वह मुनिवरों! देखो, जो इन परमाणुओं से क्षुधा को शान्त करना जानता है। बेटा! इस ब्रह्माण्ड के एक एक स्वरूप में रत्त हो जाता है, और अन्त में प्रभु को प्राप्त हो जाता है तो मेरे पुत्रों! मैं तुम्हे यह विचार इसीलिए दे रहा हूं क्या ऋषि मुनियों ने कितना तप किया है इस सम्बन्ध में और कितना जाना इस ब्रह्माण्ड को और जो जानने वाले हैं मुनिवरों! वही इस परमपिता परमात्मा को प्राप्त हो जाते हैं।

तो मेरे प्यारे! देखो, महात्मा वशिष्ठ मुनि महाराज को जब छह माह हो गए और वह अपने को मानो पोषक तत्त्वों को वायु में से गो में से सिञ्चन कर रहे थे और .... शेष अनुपलब्ध।

त्रिविद्या-गंगा स्नान



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

आज के वेद पाठ में बहुत ही सुन्दर वर्णन आ रहा था। आज हम गंगा का वर्णन कर रहे थे। अहा! हमारे वेद पाठ में गंगोत्री आदि कई शब्द आए हैं। अहा! हमारे आदि ऋषियों ने कहा है कि देखो, ब्रह्म लोक से ब्रह्मा ने हमारे लिए तीन गंगाएं नियुक्त ही है, एक आकाश गंगा हैं, दूसरी महान अन्तरिक्ष लोकों की गंगा हैं, तीसरी हमारे मृत मण्डल में बहने वाली गंगा हैं

शङ्कर नाम किसका है बेटा? शङ्कर नाम परमात्मा का है। इस संसार तथा इस गंगा के धारण करने वाले को बेटा! शिव कहा जाता हैं। अच्छा, वह कौन सा शिव हैं, वह किसको कहते हैं? बेटा हम पूर्व स्थान में कई बार व्याख्यान दे चुके हैं। वह शिव नाम तो राजा का भी है, शिव नाम सूर्य का भी है, शिव नाम परमात्मा का भी हैं।

मुनिवरों! देखो, हमारा केवल यह व्याख्यान चल रहा था कि उस परमब्रह्म ने हमारे लिए तीन प्रकार की गंगाएं अवतरित की हैं। देखो, एक आकाश गंगा है, जो अन्तरिक्ष को रमण करने वाली हैं। एक मधोति गंगा है, वह ब्रह्मलोक में रमण करने वाली हैं। और तीसरी हमारी मृत मण्डल में रमण करने वाली गंगा हैं। अहा! यह तीन प्रकार की गंगाएं हमारे लिए नियुक्त की गई हैं। आज मानव को इन तीन गंगाओं में स्नान करना चाहिए। जो मानव इन गंगाओं में स्नान नही करता, उस मानव को जीवन व्यर्थ है। अहा! मुनिवरों! पहले तो हम इन गंगाओं का निरीक्षण करें, जो परमात्मा ने हमें सृष्टि के प्रारम्भ में त्रिविद्या दी हैं। बेटा! वे त्रिविद्या कौन सी है? वे तीनों वेद है। जो वास्तव में हमारे लिए, गंगा को सदृश माने गएं हैं और त्रिविद्या को ही गंगा कहा हैं।

देखो, मुनिवरों! तो ऐसा समय आया महर्षि ककुडी मुनि महाराज ने राजा रावण यह यह प्रश्न किया कि तुम चारों वेदों के ज्ञाता हो, इस त्रिविद्या के जानने वाले हो, हमें यह निर्णय दो, कि राजा राष्ट्र का पालन किस प्रकार से कर सकता है? उस समय राजा रावण ने कहा था कि हे महाराज! मैंने तो त्रिविद्या से और वेदों से यह अध्ययन किया हैं, और यही पाया है, कि इसमें स्नान करते करते मेरी इन्द्रियां इतनी पवित्र हो गई हैं, कि मैं राष्ट्र का पालन इस प्रकार कर सकता हूँ, कि मेरे राष्ट्र की

जितनी प्रजा हैं, मेरे शासन में रह करके मेरा बहुत ही ऊँचा कार्य करेगी।

अहा! व्याख्यान देते देते महानन्द जी के प्रश्नों का उत्तर देने लगे। आज का हमारा व्याख्यान क्या प्रारम्भ हो रहा था, कि परमात्मा की दी हुई तीन प्रकार की गंगाओं में स्नान कर लेना चाहिए। उन तीन प्रकार की गंगाओं में स्नान कर लेने से बेटा! हम पवित्र बन जाते हैं और परमात्मा के दर्शन कर लेते है। यह तीन प्रकार की कौन सी गंगा हैं, बेटा! वास्तव में तो देखो, हमारे स्वाध्याय करने के लिए, हमारे सत्संग करने के लिए, हमारी यह वेद विद्याएं ही तीन गंगा हैं। जिनको गंगा, यमुना, सरस्वती भी कहा जाता है। सरस्वती नाम विद्या का भी है, सरस्वती नाम ज्ञान का हैं, और मुनिवरों! गंगा नाम कर्मकाण्ड का भी हैं, और यमुना नाम बेटा! उपासना का हैं। अहा! यह त्रिविद्या परमात्मा ने दी है, ये तीन त्रिविद्या हमारे शरीर में गंगा हैं जिनमें हम स्नान करके महान पवित्र हो जाते हैं। जैसा हम पूर्व काल में उच्चारण कर चुके हैं कि तीन प्रकार की गंगा हमारे समक्ष है, हमारे सर्व शरीर में बह रही हैं। वे तीन प्रकार की कौन सी गंगाएं है, मुनिवरों! वह तो योगी जानता है। जब योगी अपनी आत्मा को जानने वाला बन जाता है तो वह जानता है कि आत्मा का उत्थान किस प्रकार होता है, और यह तीन प्रकार की कौन सी विद्याएं हैं और कौन सी गंगा है, जिसमें यह आत्मा स्नान किया करता है, और निर्मल होता रहता हैं। स्वच्छ होकर, परमात्मा के दर्शन कर लेता हैं।

निराशा से हताश मत हो



श्रृंगी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

जैसा पुत्रों! तुम्हें प्रतीत होगा, महाभारत के काल में, जब कर्ण और अर्जुन दोनों का संग्राम हुआ और महाराजा शल्य को कर्ण का सारथी नियुक्त किया गया, तो उस समय भगवान कृष्ण और अर्जुन को यह प्रतीत हुआ कि शल्य सारथी बन रहा है। कर्ण का सारथी कौन है? महाराजा शल्य, जो माद्री का विधाता कहलाता था। अब दोनों को जब यह प्रतीत हुआ, भगवान कृष्ण और अर्जुन दोनों उनके समीप पहुंचे। उन्होंने कहा हे मानं ब्रहे तू इस कर्ण का सारथी न बन, क्योंकि तू हमारा नाती है। हमारे जीवन का साथी बन। परन्तु तुम कर्ण के साथ क्यों अपनी आभा प्रगट कर रहे हो? महाराज शल्य ने कहा, कि मैं सारथी बनूंगा। परन्तु अब मैं बन गया हूँ भगवान कृष्ण बुद्धिमान थे। उन्होंने कहा तो शल्य आप एक कार्य कर सकते हो। जो भी उच्चारण करोगे, उन्होंने कहा तो आप कर्ण को साहस न देना। उनको निराशा की वार्ता प्रगट करना जिससे हताश होते रहें। हताशता की वार्ता प्रगट करो, यह मेरी इच्छा है और जो तुम चाहते हो उच्चारण कर सकता हूँ। तो मेरे पुत्रो! महाराजा शल्य ने ऐसा ही किया।

जब कर्ण रथ में विद्यमान हुआ तो शल्य कहता है, हे कर्ण! मुझे प्रतीत होता है कि तुम्हारी आज मृत्यु होगी। उन्होंने कहा, क्या उच्चारण कर रहे हो? मैं बलिष्ठ हूँ। अर्जुन जैसे कितने भी रथी आए जाएं परन्तु वह भी मेरे लिए कुछ नहीं हैं। पुनः फिर शल ने कहा, हे कर्ण! तुम्हारी मृत्यु है आज। परन्तु यही उससे निराशा की वार्ता प्रगट करता रहा। संग्राम होने लगा। परन्तु जब उनके रथों के चक्र वह जो रथ बह रहा था उसमें कुछ अप्रीति हो गई, वह अग्रणीय न बन रहे थे, तो उस

समय उन्होंने कहा हे शल! रथ के जो चक्र हैं इनको बाहर करो। उन्होंने कहा, मैं राजा हूँ। मैं तुम्हारा सारथी बन गया हूँ।

परन्तु यह मेरा कार्य नहीं है। तुम सूत पुत्र हो। मेरे प्यारे! जब उन्होंने ऐसा कहा, अब कर्ण रथ से नीचे आ करके जब चक्रों को बाहरी करने लगे, कृष्ण जी ने कहा, हे अर्जुन! अब समय है इसकी मृत्यु का। मेरे प्यारे! शस्त्रों की, बाणों की वर्षा होने लगी। उसका शरीर छेदन होने लगा। उस समय कर्ण ने कहा, हे अर्जुन! मेरी भुजों में कोई शस्त्र नहीं है और तुम मुझे मृत्यु को पहुंचा रहे हो। कृष्ण जी कहते हैं, हे कर्ण! उस समय तुम कहाँ थे जब अभिमन्यु को मानो निहत्थे तुमने नष्ट किया। उसके भुजों में कोई शस्त्र नहीं था। आज तुम्हें अपना शरीर, अपने प्राण इतने प्रिय हैं। मेरे प्यारे! देखो, अर्जुन बाणों की वृष्टि करता हुआ शान्त हो गया। कृष्ण जी बोले, हे अर्जुन! क्यों? उन्होंने कहा, इसकी भुजाओं में कोई शस्त्र नही है। उन्होंने कहा, तुम्हारी मृत्यु आ रही है। आज तुम मृत्यु को अपने समीप लाना चाहते हो। परन्तु यहाँ शल्य कह रहा था कर्ण! तेरी मृत्यु आ गई। अर्जुन पुनः अस्त्रों की वर्षा करने लगा। परिणाम यह हुआ कि कर्ण की मृत्यु हो गई। यही विचार जब मानव के मस्तिष्कों में आता है तो वह निराशा में हताशा में बदल जाता है।

यह प्रश्न कैसे उत्पन्न होता है? वही प्रश्न लेकर के अस्त्रों शस्त्रों की निराशा और ह्रासता का यह प्रसंग कैसे उत्पन्न होता है तो इस प्रसंग ले करके अस्त्रों का ह्रासता का प्रसंग ले करके ब्रह्मचारी कवन्धी और रेवक ब्रह्मचारी दोनों विद्यमान थे। वह अपने मनों में विचार रहे थे। ऐसी कौन सी आभा है, जो मानव के अन्तः करण को छेदन कर देती है। वह निराशा है एक मानव को निराशा देते रहिए। एक प्राणी को निराशा देते रहिए। निराशा वाले की मृत्यु बहुत शीघ्र होती चली जाती है। उसका प्राण उसका साथ त्याग देता है। मेरे प्यारे! यह उन्होंने दर्शनों की भाषा में अथवा अपने साहित्य दर्शन शास्त्रों में जब दृष्टिपात किया तो उस पर विचार करने

लगे। विचार विनिमय करते हुए ब्रह्मचारी कवन्धी ने कहा, हे प्रभु! मैं इसको जान नहीं पाया हूँ। अब आगे कृतां रेवक मुनि बोले कि जानता मैं भी नहीं। परन्तु उन्होंने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते हुए, वह हिमालय की कन्दराओं में पहुंचे। हिमालय की कन्दराओं में महाराजा शिव पुत्र गणेश जी महाराज अनुसन्धान कर रहे थे और वह इसी वाक्य पर अनुसन्धान कर रहे थे कि निराशा में कैसे मृत्यु है और उल्लास में कैसे जीवन प्राप्त होता है?

निर्मोही नगरी



मेरे पुत्रों! देखो, मुझे एक वार्ता स्मरण आ गई है। मैं इस वार्ता को बहुत पुरातन काल से उद्गीत गाता रहता हूँ, बेटा! देखो, महाराजा अश्वा मनु देखो, यह जो भगवान मनु हुए, इनके पौत्र हुए हैं। जिनका नाम रेणकेतु मनु कहलाता था, रेणकेतु मनु महाराज जब राज करते थे, तो इनके पुत्र का नाम स्वाहु मनु कहलाता था। तो स्वाहु मनु मानो देखो, जब कुछ युवा में था तो एक समय मुनिवरों! देखो, राजकुमार भ्रमण करता हुए देखो, सोमकेतु मनु व्रति राष्ट्र में पंहुचे मेरे पुत्रों! देखो, वहां एक महात्मा रहते थे, महापुरूष ऋषि रहते थे, जिनका नाम दद्दड़ीय कहलाता था मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने ऋषि के समीप भ्रमण करते हुए जब ऋषि के द्वार पर पंहुचे, तो दद्दड़ीय ने कहा कहो राजकुमार तुम्हारा नामोकरण क्या है? उन्होंने कहा मेरा नामोकरण निर्मोही है। उन्होंने कहा अरे, तुम्हारा पिता का नाम क्या है? कि उनका नाम भी निर्मोही है। उन्होंने कहा तुम्हारी माता भी, वह भी निर्मोही है, और राष्ट्र भी निर्मोही कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा हे राजकुमार! निर्मोही तो वह कहलाते हैं जिसको किसी से मोह नही होता, और तुम अपने राष्ट्र को निर्मोही कहते हो। उन्होंने कहा हां भगवन! मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने कहा कि निर्मोही तो वह होता है, जो न्यायाधीश होता है। और देखो, किसी से मोह नही होता, जैसे परमपिता परमात्मा न्याय करता है, परन्तु वह निर्मोही है। उसे मोह नही है, वह न्याय करता है, न्याय के गर्भ में ही मानो उसकी प्रतिभा निहित रहती है। मेरे पुत्रों! देखो, राजकुमार ने कहा प्रभु! यह आप परीक्षा कीजिए। मेरे प्यारे! देखो, राजकुमार तो उनके आश्रम में रहे, और दद्दड़ीय ऋषि महाराज ने वहां से गमन किया और भ्रमण करते बेटा! वह राजा के समीप आए, राजा ने अपने आसन को त्याग दिया। और राजा ने ऋषि के चरणों को स्पर्श किया, और

उन्हें आशीर्वाद क्या अपने विचारां ब्रव्हे व्रतं राजा से कहा भगवन! मैं तो किसी आपतकाल में आया हूँ। राजा ने कहा प्रभु! आप अन्न मेरा अतिथि स्वीकार कीजिए। उसके पश्चात अपनी वार्ता प्रगट कीजिए। उन्होंने कहा नही प्रथम मेरी वार्ता स्वीकार करो, राजा ने कहा नही हमारे यहां का यह नियम बना हुआ है, जो ऋषि आते हैं उनका प्रथम स्वागत होना चाहिए। कोई भी अतिथि रूप बन करके आए उन्होंने कहा नही मेरी वार्ता स्वीकार करो, दोनों इस प्रकार के मानो देखो, विचारधारा बन गई। तो मानो देखो, ऋषि के विचारों को उन्होंने स्वीकार किया, उन्होंने कहा भगवन! उच्चारण कीजिए, उन्होंने कहा तुम्हारा कोई पुत्र है? उन्होंने राजा ने कहा प्रभु! हां एक पुत्र संसार की दृष्टि से कह देते हैं। मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणे राजा ने कहा हे ऋषिवर! आप तो जानते हैं आत्मा न किसी का पुत्र होता है, न किसी की पुत्री होती है, न पत्नी होती है, न ब्रहे यह कोई नही होता परन्तु आत्मा को अपनी स्थलियों पर ज्ञान प्रयत्न में संलग्न रहती है। और परमात्मा के समीप जाने के लिए उत्सुक रहती है। तो भगवन! मैं यह वार्ता कैसे प्रगट करूं कि मेरे कोई पुत्र हैं, परन्तु संसार की दृष्टि से कह सकते हो। उन्होंने कहा तो ऋषि ने कहा हे राजन! तुम्हारा जो पुत्र है वह कहीं भ्रमण करने गया, तो उसे व्याघ ने सिंह ने आ करके उसके दो भाग कर दिए और मैंने उसको देखो, कहा सिंह से तुम इस राजकुमार को मानो आहार न करो। उसके दो भाग हैं, भगवन! आप उन्हें ला करके, उनका दाह संस्कार करो। उन्होंने कहा हे ऋषिवर! वह जो शरीर है, वह आत्मा का भोजन, वह तो सिंह का भोजन बन गया है भगवन! और आत्मा किसी काल में नष्ट नही होता, आत्मा चित्त के मण्डलों को ले करके, वह आत्मा देखो, चित्त के मण्डल में प्रवेश कर गई है, और वह शरीर सिंह राज का भोजन बन गया है, आईए, भगवन! आप मेरे अतिथिपने को स्वीकार कीजिए। और ये तो संसार में गति चलती ही रहती है। मेरे पुत्रों! देखो, राजा ने जब ऐसा कहा,

तो ऋषि ने विचारा कि यह तो राजा है, पिता है, पिता को इतना मोह नही होता, चलो माता के समीप चलता हूँ। उन्होंने कहा राजन्! मैं यहां से गमन कर रहा हूँ और मैं आपके राष्ट्र गृह में प्रवेश करूंगा, राजा ने कहा भगवन! बहुत प्रियतम। मेरे प्यारे! देखो, वह माता के समीप पंहुचे वह देवी ने उनका स्वागत किया और उनके चरणों की वन्दना की उन्होंने कहा कहिए ऋषिवर! कैसे आगमन हुआ है? ब्रह्मवेत्ताओं का तो जब आगमन होता है, तो मानो पूर्व की सूचना हो जाती है, आपकी कोई सूचना भी नही उसका कारण क्या है? उन्होंनें कहा हे माते! देखो, तुम्हारा कोई पुत्र है, उसके व्याघ ने दो भाग कर दिए हैं, और मैं इसीलिए आया हूँ कि तुम उसको ला करके, उसका दाह संस्कार करो। मेरे प्यारे! देखो, माता ने कहा हे भगवन! आपको ये प्रतीत है जब माता के गर्भस्थल में निर्माण करने वाला निर्माण करता है, तो माता को यह प्रतीत नही है, कौन निर्माण कर रहा है? किसने बुद्धि का निर्माण किया है? किसने मानो देखो, मनस्तव का निर्माण किया है? और इसमें जो अस्थियां हैं मिज्ञा उसका किसने मानो देखो, सुगठिता से निर्माण किया है, वह निर्माणवेत्ता प्रभु है। और सिंहराज का भी निर्माण करने वाला वही है हे भगवन! देखो, उसका शरीर आहार बन गया है, आत्मा का विनाश नही होता, आत्मा चित्त के मण्डलों को ले करके देखो, अपने चित्त में प्रवेश कर गया है। हे भगवन! आपं ब्रह्मे लोकां हे प्रभु! वह तो सिंह का भोज्य है, उसे भोज करने दो। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने आश्चर्य से कहा यह तो वास्तव में निर्मोही है उन्होंने कहा चलो, भगिनी के समीप चलता हूँ। वह अपने बहन ब्रह देखो, उनके समीप पंहुचे और उन्होंने अमृतं देखो, उसी प्रकार ऋषि का स्वागत किया उन्होंने कहा कहो भगवन! कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा हे पुत्री! तुम्हारा विधाता ऐसे तुम सिंह ब्र्व्हे मेरे आश्रम में उसके दो भाग हैं, अब मेरी इच्छा यह है कि उनको संस्कार किया जाएं, उन्होंने कहा प्रभु! वह सिंहराज

का भोज नही हैं, सिंह राज ने उसे स्वीकार नही किया है। मेरे विधाता ने तो कोई पाप भी नही किया जो पापाचार के कारण सिंहराज ग्रहण न करे मानो देखो, सिंह राज को तो ग्रहण कर लेना चाहिए। क्योंकि आत्मा का तो विनाश ही नही होता, भगवन! हे प्रव्हा व्रतं मेरे प्यारे! देखो, ऋषि आश्चर्य में चकित हो गएं, उन्होंने कहा वास्तव में यह तो निर्मोही है। उन्होंने कहा चलो, पत्नी के समीप चलता हूँ। वह राजकुमार की पत्नी के गृह में प्रवेश किया, प्रवेश करके उन्होंने उसी प्रकार उनका स्वागत किया, और कहा, कहो भगवन! कैसे आगमन हुआ? उन्होंने कहा हे भगवन! हे दिव्या! मैं इसीलिए आया हूँ, तुम्हारे पति के उसके दो भाग, सिंह राज ने कर दिए हैं वह उसका भोज्यं ब्रव्हे मैंने, मेरी इच्छा यह बनी हैं कि मैं उसका दाह संस्कार कराऊं। तुम उसका दाह संस्कार करो। मेरे प्यारे! देखो, देवी ने कहा प्रभु! आपको ये प्रतीत है क्या यह जो मधु विद्या हमारे यहां परम्परागतों से, मानवीय मस्तिष्को में सदैव निहित रहती है। पत्नी जो होती है, वह पति तक सीमित होती है, और यदि वह पत्नी अपने लिए पत्नी बन जाएं और यह स्वीकार कर ले कि मेरा पति तो स्वामी वह परमपिता परमात्मा जिसने मेरा निर्माण किया है, तो यह जो संसार के पति हैं। यह मानो देखो, स्वार्थ तक सीमित रहते हैं भगवन! मैं तो उस परमपिता परमात्मा की दिव्या हूँ। मैं उस परमपिता परमात्मा को मैंने अपना स्वामीतव मानो अपना रक्षक पति का अर्थ होता है। जो रक्षा करता है, वे परमपिता परमात्मा रक्षा करता है, क्योंकि यदि पत्नी रूग्ण हो जाती है, अग्नि न रहे तो यह संसार का पति मुझे अग्नि नही दे सकता। मानो यह मुझे वायु नही दे सकता। हे भगवन! मैंने उस मधु विद्या का बाल्यकाल मे गुरुओं की शरण में जा करके अध्ययन किया है, और यह मैंने पाया है, क्या पत्नी जो होती है, वह पति तक सीमित होती है, और यदि अपने लिए स्वतः पत्नी बन जाएं, कि मेरा रक्षक तो परमपिता परमात्मा है, मैं उसी की दिव्या हूँ, तो मैं मानो देखो,

मैं आत्मा हूँ, मैं शरीर नही हूँ, तो भगवन! देखो, ये शरीर तो नश्वर है, ये मानो देखो, इसका अग्नि में दाह कर दो, या इसे जल में मानो प्रवाह कर दो, चाहे इसे सिंहराज आहार कर जाएं, इसका आत्मा निकस जाने के पश्चात कोई रहस्य नही रहता। मेरे प्यारे! देखो, आचार्य, ऋषिवर बड़े प्रसन्न क्या एक स्थली वह प्रसन्न हैं एक में आश्चर्य चकित है। मेरे पुत्रों! देखो, वहां से भी उन्होंने गमन किया। मेरे प्यारे! देखो, प्रजा में पहुचे, और प्रजा में जो मानो वशिष्ठ वशिष्ठ वहां प्राणी थे, उन्होंने राष्ट्र के सब एकत्रित किए और एकत्रित करने के पश्चात उन्होंने जब वह एकत्रित हो गएं तो ऋषि से कहा कहिए भगवन! क्या कारण है, जो आपने हमें एकत्रित किया है। उन्होंने कहा हे प्रजाओं! तुम्हारा राजा है। उन्होंने कहा है उनके कोई राजकुमार है। उन्होंने कहा ब्रहे। उन्होंने कहा तुम्हारे जो राजकुमार हैं राजा के पुत्र वह एक सिंह राज ने उसके दो भाग बना दिए हैं, और वह मेरे आश्रम में स्थिर है मैं चाहता हूँ उसका दाह संस्कार हो जाएं।

तो मेरे प्यारे! देखो, सब प्रजा ने कहा नमः होते हुए नतमस्तिष्क हो करके बोले कि हे ऋषिवर! तुम्हें यह प्रतीत है तो सिंहराज भी तो राजा की प्रजा है, भगवन! जैसे हम प्रजा ऐसे सिंह राज भी प्रजा है, वह आत्मा तो मानो देखो, किसी की प्रजा होता नही शरीर के नाते यह प्रजा बनी हुई है, और जब प्रजा है यदि उसका भोजन उसे प्राप्त हो जाएं तो इसमें आश्चर्य क्या है भगवन! यदि सिंहराज देखो, राजकुमार अमृतं देखो, सिंहराज का भोजन बन गया तो भोज तो उसे कहीं से पाना ही है भगवन! उदर की पूर्ति तो उसे करनी ही है, यदि वह उसका आहार बन गया तो आश्चर्य नही क्योंकि आत्मा तो इतना सूक्ष्म है। वह न तो किसी का न तो आहार बनता है, न अग्नि उसे नष्ट करती है। हे प्रभु! देखो, यह आत्मा तो एक रस रहने वाला है, इस शरीर में संस्कारों को उद्बुद्ध करने के लिए शरीरों की प्राप्ति होती है। और संस्कार के साथ में संस्कार

का समन्वय चित्त मण्डल से होता है, और चित्त मण्डल से सम्बन्ध आत्मा का होता है, मानो देखो, यह जब शरीर को त्यागता है, तो इससे आत्मा देखो, अपने संस्कारों को ले करके चित्त के मण्डल में चला जाता है। हे प्रभु! यह तो शरीरां ब्रव्हे वह तो राष्ट्र की प्रजा है, भगवन! तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि बड़े आश्चर्य चकित हो गएं। तो ऋषि ने वहां से भ्रमण किया और भ्रमण करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, वहां से राजकुमार के समीप पंहुचे, राजकुमार ने नतमस्तिष्क हो करके कहा कहिए भगवन! उन्होंने कहा हे राजकुमार! तुम्हारा राष्ट्र तो वास्तव में ब्रह्मवेत्ताओं का राष्ट्र है, यह तो ब्रह्मज्ञानियों का राष्ट्र है, तो मुनिवरों! देखो, जब भी राष्ट्र का निर्वाचन हुआ है, भगवान मनु ने कहा है, क्या सब प्रजा मानो देखो, सब प्रजा महान बुद्धिमान बन जाएं और कर्तव्य का पालन करने लगे ओर कर्तव्यवादी ही मेरे प्यारे! देखो, राष्ट्र को उन्नत बनाते रहते हैं। तो भगवान मनु ने राष्ट्र का निर्माण किया है, और किस लिए की प्रजा में प्रभु का ज्ञान हो और ब्रह्मज्ञान हो एक दूसरे को मानो नष्ट करने की प्रवृत्ति न हो, और एक दूसरे को आहार करने की प्रवृत्ति न हो। मेरे प्यारे! देखो, अहिंसामयी जो राजा होता है, वह स्वतः ब्रह्मवेत्ता बन जाता है, और ब्रह्मवेत्ता जब राजा होता है तो प्रजा भी ब्रह्मवेत्ता बन जाती है। और उस राजा के राष्ट्र में ईश्वरीय जो कर्म है, वह एक सूत्र में पिरोया जाता है। तो मुनिवरों! देखो, भगवान मनु ने सबसे प्रथम राष्ट्र का निर्माण किया है, और राजा कौन होता है? मेरे प्यारे! देखो, न्यायालय में विराजमान है, एक राजकुमार है, अपना पुत्र है, अपना एक प्रजा का पुत्र है, जो न्याय करने वाला राजकुमार क्या मानो देखो, न्याय से दण्डित करता है। वही मेरे पुत्रों! देखो, न्यायधीश कहलाता है, मेरे प्यारे! देखो, माता वह ममतामयी होती है, जो मेरे पुत्रों! देखो, ममत्वां ब्रह्मणे कर्तव्य का पालन कर रही है। पालना कर रही है, गर्भस्थल में ब्रह्मवेत्ता बना रही है, और ब्रह्मवेत्ता जब बन जाता है, तो माता

प्रसन्न हो रही है, माता कहती है कि जब वह ब्रह्मवेत्ता बन करके तपस्या के लिए चला जाता है। तो माता कहती है कि मेरा गर्भाशय पवित्र बन गया है, आज मैं कितनी सौभाग्यशाली हूँ, जो मेरा पुत्र मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला बाल्य यदि ब्रह्मवेत्ता बन गया है, ब्रह्मज्ञानी बन गया है, और तपस्या में परणित हो गया है, उग्रवादी जैसे परमपिता परमात्मा ने उसको धारण करके मेरे प्यारे! देखो, संसार की रचना की है। इसी प्रकार तपस्या में परणित हो करके परमात्मा को प्राप्त करता है, यह मेरा सौभाग्य है, मेरा जीवन सफल हो गया है। तो मेरे पुत्रों! देखो, विचार हमारा जब मानव इस प्रकार जब बन जाती है, तो समाज तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! देखो, पराविद्या को जानने वाले धारण करने वाले वे परमपिता परमात्मा पुरोहित है। परमपिता परमात्मा की महा महिमा एक अनन्ततव में रमण करती रहती है। आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा विचार क्या हम बहुत दूरी चले गएं विचार विनिमय देते देते बेटा! हम बहुत गम्भीर मुद्रा में चले गएं हैं। आज का विचार विनिमय क्या कि हम परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए, कर्तव्यवाद में रत्त होते हुए, और निर्वाचन जो प्रणाली है। ऋषि मुनियों की बड़ी विचित्रता में परणित रही है, यह है बेटा! आज का अब मुझे समय मिलेगा, तो मैं तुम्हें आगे की शेष चर्चाएं कल प्रगट कर सकूंगा।

तो मेरे प्यारे ऋषिवर! आज का हमारा वेद का विषय क्या कह रहा था, मुझे एक वार्ता स्मरण आती चली जा रही थी, आज के इस वाक् में एक समय बेटा! महाराजा प्रजापति के यहाँ से घोष हुआ, और उस घोष में यह हुआ, कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ। तो मुनिवरों! जब आत्मा के लिए उसमें देखो, घोषणा हुई, यह घोष हुआ, तो यह घोष मुनिवरों! दैत्यों और देवताओं दोनों ने ही श्रवण किया, जब दैत्यों ने श्रवण किया, दैत्यों ने अपनी सभा की और सभा में बेटा! विरोचन को निमन्त्रित किया और विरोचन को सभापति बना करके देखो, सभी दैत्यों ने कहा कि महाराज! आपको देखो, महाराजा प्रजापति के यहाँ से घोष हुआ है, और यह घोषणा, उन्होंने कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ। आज जैसा शुभ अवसर किसी भी काल में प्राप्त नहीं होगा भगवन! क्योंकि जहाँ एक इस प्रकार की घोषणा आत्मा के ज्ञान के ऊपर होती है महाराज विरोचन ने कहा बहुत सुन्दर तो महाराज विरोचन को बेटा! देखो, दैत्यों ने कहा कि महाराज! आप यहाँ से अपना प्रस्थान कीजिए और प्रजापति के यहाँ अपनी वार्ता और अपनी आत्मा का ज्ञान ले करके हमें ज्ञान कराईए।

मुनिवरों! मुझे आज एक वार्ता स्मरण आती चली जा रही है। एक समय प्रजापति ने एक घोष करया कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ वह घोष दैत्य और देवता दोनों ने ही श्रवण किया। दैत्यों ने अपने सवामी विरोचन से कहा कि आज प्रजापति के यहाँ से घोष हुआ है कि मैं आत्मा का ज्ञान करा देता हूँ अब आत्मा का ज्ञान को प्राप्त करने के लिए हमें अग्रणी बनाइये। विरोचन ने कहा बहुत सुन्दर उधर देवताओं ने इन्द्र से कहा कि आप आत्मा का ज्ञान प्रजापति से प्राप्त कर हमें प्राप्त कराइये। उस समय इन्द्र ने कहा कि बहुत सुन्दर।

तो मुनिवरों! एक स्थान से इन्द्र और एक स्थान से विरोचन दोनों ने प्रजापति के आसन को प्रस्थान किया। भ्रमण करते हुए एक भयंकर वन में से तीन तीन समिधायें ले करके यह प्रजापति के आश्रम में जा पहुंचे। प्रजापति ने दोनों का बड़ा आदर किया। दोनों ने उनके चरणों को स्पर्श करके कहा कि भगवन्! लीजिए यह तीन समिधायें। उनके चरणों में तीन समिधायें अर्पित करके विराजमान हो गए। विरोचन ने कहा, हे भगवन्! आपने घोष कराया है कि मैं आत्मा का ज्ञान कराता हूँ आप हमें आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर, परन्तु विरोचन जी हमारे यहाँ एक नियम है कि मेरे यहाँ ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करो, तपस्वी बनो। उन्होंने कहा बहुत सुन्दर।

बेटा! विरोचन और इन्द्र दोनों ने बड़े आनन्द पूर्वक आसन में विराजमान हो करके तपस्वी बनने का सङ्कल्प किया कि वास्तव में हम तपस्वी बनेंगे। तो उन्होंने ३२ ३२ वर्ष तक का सङ्कल्प लिया और ब्रह्मचर्य का पालन करने के लिए वह तत्पर हो गए। ब्रह्मचर्य के आश्रम में विराजमान हो करके प्रभु का चिन्तन निद्यासन इत्यादि करते रहे। जब वह ३२ वर्ष समाप्त हो गए तो प्रजापति के द्वार पर आ पहुंचे और प्रजापति से कहा कि हे भगवन्! अब हमें आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि आत्मा

का ज्ञान चाहते हो तो यह जो शरीर है इसी को आत्मा कहते हैं, इसी का तुम पालन करो, इसी के ऊपर निद्यासन, इसी का पान करना आत्मा को जानना है। अब विरोचन बड़ा मग्न हो गया। इन्द्र भी मग्न हो गए। दोनों ने आदित्य की वार्ता को स्वीकार करके प्रजापति के यहाँ से प्रस्थान किया। विरोचन तो दैत्यों की सभा में जा पहुंचे और दैत्यों से कहा कि प्रजापति ने कहा कि यह जो मानव शरीर है इसी को हमारे यहाँ आत्मा कहते हैं इसी को तुम आत्मा स्वीकार करो। दैत्यों ने वह वाक्य स्वीकार कर लिया और मग्न हो गए कि आत्मा का ज्ञान यही है कि शरीर का पालन करो। परन्तु इन्द्र ने मार्ग में भयंकर वन में यह विचारा कि प्रजापति ने ऐसा कहा है कि इसी को आत्मा कहते हैं यह कैसे स्वीकार किया जा सकता है। क्योंकि जब देवता यह प्रन करेंगे कि यह जो शरीर है वह तो अपंग होने पर भी जीवित रहता है। एक नेत्र चला जाता है मानव जीवित रहता है दोनों नेत्र चले जाते हैं तब भी जीवित रहता है हस्त चले जाते हैं तो उसके पश्चात भी जीवित रहता है। यह शरीर आत्मा किस प्रकार हो सकता है क्योंकि आत्मा का विभाजन नहीं होता, आत्मा एक रस रहता है। आत्मा यदि शरीर होगा तो आत्मा के विाग भी हमें स्वीकार करने होंगे। इसलिए मुझे प्रतीत होता है कि यह जो शरीर है यह आत्मा नहीं हो सकता और मैं प्रजापति के द्वार चलूं।

तो मुनिवरों! उन्होंने प्रजापति के यहाँ प्रस्थान किया और तीन समिधा अर्पण करे प्रजापति से कहा कि भगवन्! आपने इस शरीर को आत्मा कहा है परन्तु यह विश्वास नहीं होता क्योंकि मेरे विचार में यह शरीर आत्मा प्रतीत नहीं होता मुझे निर्णय कराइये कि आत्मा क्या है? उस समय प्रजापति ने कहा है इन्द्र! तुम यथार्थ उच्चारण कर रहे हो परन्तु यदि आज तुम आत्मा को जानना चाहते हो तो तुम मेरे यहाँ ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन करो। इन्द्र ने वहीं ३२ वर्ष तक ब्रह्मचर्य का पालन किया, तपस्वी बने। इन्द्रियों पर संयम करते हुए तपस्या के पश्चात जब ३२ वर्ष समाप्त हो गए तो प्रजापति के समक्ष नतमस्तक होकर कहा भगवन्! आपके कथानानुसार ३२ वर्ष समाप्त हो गएं हैं अब मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि हे इन्द्र! आज तुम आत्मा को जानना चाहते हो तो यह जो स्वप्न अवस्था था स्वप्न का जो क्षेत्र है इसको ही आत्मा कहते हैं। इसी को तुम जानने का प्रयास करो। इन्द्र ने प्रजापति के आसन से प्रस्थान किया और भयंकर वन में पहुंचे। विचार विनियम करने लगे कि हम इस स्वप्न को आत्मा कैसे स्वीकार करें। जब भयंकर वन में मनन करने लगे तो उन्होंने यह निर्णय किया कि यदि वास्तव में हम यह सवीकार कर लेते हैं कि स्वप्न का जो क्षेत्र है यही आत्मा है तो इसमें मानव में कितनी घृणा होती है, कितना ब्रह्मण होता है, इस पर विचार विनियम करना चाहिए। उन्होंने मनन किया कि जब मानव स्वप्न के क्षेत्र में जाता है वहाँ रोग होता है, शोक भी प्रतीत देता है, वहाँ कहीं व्याकुल होते हैं, कहीं द्रव्यपति बन जाते हैं, कहीं द्रव्यपति से निर्धन बन जाते हैं। जिसमें इतना कष्ट हो, जिसमें सङ्कल्प विकल्प का इतना क्षेत्र हो वह आत्मा नहीं

हो सकता। बेटा! जब यह विचार क्षेत्र हो वह आत्मा नहीं हो सकता। बेटा! जब यह विचार इन्द्र के द्वारा आए तो वह तीन समिधा ले करके फिर प्रजापति के आसन को प्रस्थान किया। प्रजापति के द्वारा नतमस्तक होकर के वे बोले कि प्रभु! मुझे तो यह प्रतीत हो रहा है कि यह जो स्वप्न अवस्था है यह आत्मा नहीं हो सकता। मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। आत्मा क्या है? मैं आत्मा को जानना चाहता हूँ। जिस समय इन्द्र ने कहा तो प्रजापति ने कहा कि तुम यथार्थ उच्चारण कर रहे हो परन्तु तुम मेरे यहाँ ३२ वर्ष तक का ब्रह्मचर्य का और पालन करो।

तो बेटा! जब प्रजापति ने ऐसा कहा तो इन्द्र ने स्वीकार कर लिया और ३२ वर्ष तक पुनः ब्रह्मचर्य रहने का सङ्कल्प किया। जब वह ३२ वर्ष समाप्त हो गए तो उन्होंने जाकर प्रजापति से कहा कि प्रभु! मुझे अब आत्म का ज्ञान कराइये। उन्होंने कहा कि बहुत सुन्दर। यह जो सुषुप्ति अवस्था है इसे आत्मा कहते हैं तुम इसके ऊपर निध्यासन करो, विचार करो। तो इन्द्र ने वहाँ से प्रस्थान किया। उसी भयंकर वन में पहुंचे और निर्णय करने लगे कि यह जो सुषुप्ति अवस्था है यह कैसे आत्मा हो सकता है। क्योंकि मुझे यह प्रतीत नहीं हो पा रहा है कि यह जो सुषुप्ति अवस्था है यह क्या है? देखो, पांच ज्ञान इन्द्रि पांच कर्मेन्द्रिय का जो क्षेत्र है वह मन में लय हो जाता है, मन बुद्धि में लय हो जाता है और बुद्धि का क्षेत्र है और वह चित्त के क्षेत्र में रमण कर जाते हैं। चित्त उस अवस्था को कहते हैं जहाँ मानव के जन्म जन्मान्तरों के संस्कार निहित होते हैं। अब जब वह मन इन्द्रियों का विषय शान्त होने के कारण चित्त में लय हो जाता है तो उसी को सुषुप्ति अवस्था कहते हैं। वह तो केवल उस महान कारण में लय हो करके, महान चित्त में लय हो करके जीवन को पान किया जाता हो एक तो जीवन देने वाला और एक जीवन को पान करने वाला। क्योंकि जीवन शरीर को प्राप्त होता है, शरीर को शक्ति प्राप्त होती है, वह शक्ति चित्त द्वारा आती है। अब तो चित्त के द्वारा शक्ति देता है वह एक और वस्तु है। यह जो सुषप्ति अवस्था है इसको हम आत्मा कदापि भी उच्चारण नहीं कर सकते। जब उन्होंने ऐसा निर्णय किया तो पुनः तीन समिधा ले करके प्रजापति के आसन पर पहुंचे और प्रजापति से कहा कि प्रभु! यह जो सुषुप्ति अवस्था है इसको हम आत्मा नहीं कह सकते, न यह आत्मा हो सकता है आपने वह मुझे क्या निर्णय कराया है। उन्होंने कहा कि हे इन्द्र! तुम यथार्थ उच्चारण करते हो परन्तु मेरे यहाँ पुनः पांच तपस्वी बनो। तो बेटा! वह पांच वर्ष तक तपस्या करने के लिए तत्पर हो गए। तपस्या करने लगे। पांच वर्ष के पश्चात वह नतमस्तक हो करके बोले प्रभु! मुझे आत्मा का ज्ञान कराइये। उस समय प्रजापति ने कहा, इन्द्र! आत्मा वह पदार्थ है जो किसी भी काल में नष्ट नहीं होता। वह सदैव एक रस रहता है मानो वह तपस्या में संलग्न रहता हैं आत्मा वह पदार्थ है जिसमें न मानव को रोग होता है न शोक होता है न आलोचना करता है एक रस में विराजमान हो जाता है। आज हम अपने को ऊँचा बनाना चाहते हैं आत्मा को जानना चाहते हैं आत्मा को जानने

के लिए हमें विचारना होगा कि यह संसार क्या है, संसार में अमृत क्या है और तप क्या है। इसको जाने बिना हम आत्मा को नहीं जान सकेंगे परन्तु मेरे विचार में तो इन्द्र! आत्मा वही है जो इस शरीर को क्रियाशील बनाता है शरीर को घृति देता है ज्ञान और प्रयत्न दोनों उसी के द्वार से उत्पन्न होते हैं, उसी को हमारे यहाँ आत्मा कहा जाता है।

तो मुनिवरों! जब आत्मा का उन्होंने निर्णय कराया तो इन्द्र को शान्ति हो गई और यह निर्णय हो गया कि वास्तव में आत्मा और शरीर दोनों भिन्न भिन्न हैं। शरीर तो कणों से उत्पन्न होता है और वह प्रकृति के कण हैं मानो जो क्रिया उत्पन्न होती है वह ज्ञान और प्रयत्न आत्मा के माध्यम से उत्पन्न होती है। जब यह निर्णय उनके हृदय में आ पहुंचा तो आगे चल करके उन्होंने बहुत स्पष्ट शब्दों में कहा कि हे भगवन्! मैंने १०१ वर्ष की तपस्या की है।

तो मुनिवरों! वास्तव मे मानव को अपने विचारों में सुदृढ़ और आत्म विश्वासी होना चाहिए। आत्म विश्वासी ही बेटा! संसार में राष्ट्र का स्वामी बन सकता है। जिस मानव को अपनी आत्मा पर विश्वास नहीं होता, वह राष्ट्र का नेतृत्व नहीं कर सकता। राष्ट्र और आत्मा का सम्बन्ध होता है, यह जो आत्मा मानव का केन्द्र है इसे जाने बिना वह कोई कर्तव्य नहीं कर सकता। आत्मविश्वासी बन करके दृढ़ता में पहुंचने के पश्चात मानव के जीवन की एक ऊर्ध्वा गति बन जाती है। जीवन में व्यापकता आ जाती है। व्यापकता आने के पश्चात मानव जीवन को धर्मज्ञ बना लेता है। ऋषि मुनियों ने कहा है कि इन्द्रियों को जानना, उनके विषयों को जानना, उनकी वास्तविकता जानना यही धर्म कहलाता है।

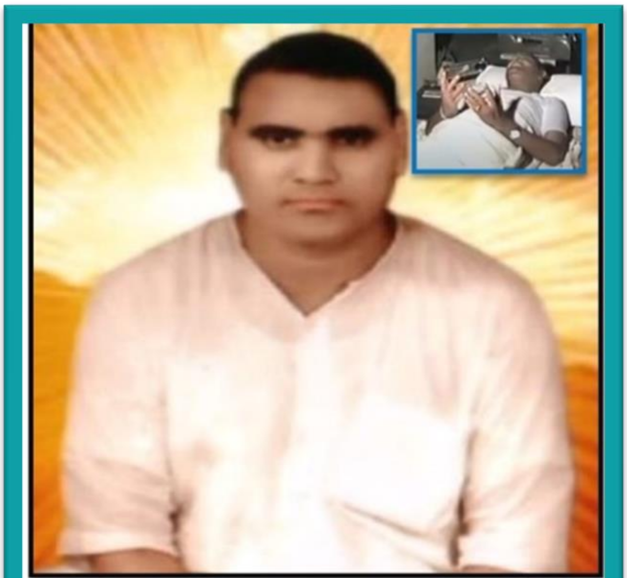
तो मेरे प्यारे! भद्र पुरुषों! अभी अभी हम प्रकट कर रहे थे, कि हे मानव! तू वास्तव में व्यवहार में भी कुशल बन। आत्मा पर तेरी दृढ़ता होनी चाहिए। विश्वास, धारणा यह मानव का स्वाभाविक गुण और लक्षण होता है। इसे जानने की मानव में स्वतः इच्छा होती है। मानव को अपना जीवन बनाना ही उसका कर्तव्य है।

बालक माता के गर्भ से पृथक होता है, तो माता उसकी प्रकृति का सुन्दर रूपों से निर्माण कर देती है। शरीर का निर्माण माता नहीं करती, परन्तु उसकी प्रवृत्तियों का, उसके विचारों का चुनाव माता के द्वारा होता है। प्रारम्भ का जीवन वास्तविक होना चाहिए। यदि मानव प्रारम्भिक जीवन में ही शान्त हो गया, उसकी प्रक्रियाओं में अशुद्धि आ गई, तो मानव जीवन के मध्यम में और अन्त में जीवन की सार्थकता समाप्त होती चली जाती है। जैसे यदि गृह निर्माण में, प्रारम्भ में ही गृह की नींव ऊँची, सुन्दर और परिवक्व होती है, तो वह गृह बहुत काल तक नष्ट नहीं होता। इसी प्रकार मानव के प्रारम्भ के जीवन में वास्तविकता होनी चाहिए, ब्रह्मचर्य और विचारों में सुदृढ़ता होनी चाहिए। तो जब वह मध्य और अन्त में जाता है, तो उसके जीवन में अशुद्धियां नहीं आती। वह

हताश नहीं होता।

हताश कौन प्राणी होते हैं? जो आत्मविश्वासी नहीं होता। जिसके द्वारा आत्मा और मन की सूक्ष्मताएं होती है। जो मानव यह जान लेता है, कि मुझे कर्तव्य दर्पण बनना है, अपने जीवन का दिग्दर्शन करना है, तो वह मानव संसार में अपनी क्रियाओं से हताश नहीं होता। हताश वही प्राणी होता है, जो अपने मानवत्व का मन्थन नहीं करता, जिसे अपनी प्रवृत्तियों पर विश्वास नहीं होता, आत्मा का ज्ञान नहीं होता, जीवन सदैव विडम्बना में व्यतीत होता है।

जीवन में प्रसन्न रहने का सूत्र



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! एक द्रव्यपति राजा मन्त्रियों सहित भ्रमण कर रहे थे। उन्होंने वन में एक दरिद्र व्यक्ति को देखा, जो समिधाएं लाकर गृहस्थियों के गृहों पर पहुंचाया करता था। वह मार्ग मे मग्न भाव से उच्च स्वरों के साथ गान गा रहा था। वह ऐसा गान गा रहा था कि जैसे ऋषिजन वेदों का घन पाठ करते हैं। उसके गायन पर तो पक्षीगण भी मुग्ध हो रहे थे।

उस राजा ने मन्त्रियों से कहा, अरे! भई! यह क्या है? यह कैसा मुग्ध करने वाला गान गा रहा है? ऐसा गान तो पवित्र मन वाला व्यक्ति ही गा सकता है। जो सुखी होता है। जो सुखी नहीं, जो कलह में मग्न हो, वह ऐसा गान कर नहीं गा सकता। यह कितना सुखी होगा? मुनिवरों! राजा ने उससे कहा कि अरे! भई! तुम तो बड़ा सुन्दर गान गा रहे हो। उसने उत्तर दिया कि गान गाना मेरा कर्तव्य है। इसलिए मैं गा रहा हूँ। राजा ने कहा कि अरे! तुझे ऐसी क्या मस्ती है?

उस व्यक्ति ने उत्तर दिया कि मुझे तो जितनी मस्ती है, इतनी मस्ती तो राजा को भी नहीं हो सकती। राजा ने पूछा, भई! यह कैसे? गान गाने वाले ने कहा कि महाराज! देखो, जो द्रव्य मैं प्रातःकाल से सांयकाल तक स्वयं के परिश्रम से लाता हूँ, उसके चार भाग बना देता हूँ। उसमें से एक भाग तो उनको देता हूँ, जिनसे मैंने लिया हुआ है, द्वितीय भाग विद्वानों को देता हूं, जो इस लोक और परलोक दोनों में मिलेगा। तीसरा भाग उनको देता हूँ, जिनसे आगे चल कर मेरे कार्य में सहायता मिलेगी। चतुर्थ भाग अपने लिए रख लेता हूं, अर्थात अपने पर व्यय करता हूँ। इस चतुर्थ भाग में, मैं और मेरी पत्नी आनन्द मनाते हैं। राजा ने कहा कि भई! ये चार भाग अपने द्रव्य के कैसे बनाते हो, वे कैसे कैसे व्यय होते हैं? यह स्पष्ट करके कहो।

उसने कहा कि महाराज! मैं दिन भर में जितना भी स्वयं के परिश्रम से धन प्राप्त करता हूँ उसके चार भाग कर देता हूँ। एक भाग तो मैं उन्हें देता हूँ जिनसे मैंने लिया है। राजा ने कहा वे कौन है? वे मेरे माता पिता हैं। जिन्होंने मेरी पालना की, मेरी माता ने मुझे गर्भ स्थल में धारण किया, मुझे योग्य

बनाया। मुझको पालकर उच्च बनाया। मैं उनको एक भाग देता हूँ। दूसरा भाग वेदों के विद्वान, वेदों का प्रचार करने वाले विद्वान, सदाचारी ब्राह्मणों, अतिथियों और महान योगियों की सेवा में लगा देता हूँ या उनको दान कर देता हूँ। यह द्रव्य मुझको परलोक में प्राप्त हो जायेगा। तीसरा भाग मैं संसार के व्यक्तियों को देता हूँ। जब मुझको अधिक द्रव्य की आवश्यकता पड़ती है, तब मैं उनसे ले लेता हूँ। चतुर्थ भाग मैं और मेरी पत्नी दोनों आनन्द से रहते हैं। तब ही मैं इतना सुखी हूँ। इसी कारण मैं इस प्रकार का गान गा रहा हूँ। यदि मैं सुखी न होता तो आज मार्ग में ऐसा गान कदापि न गा सकता था।

तो मुनिवरों! इसलिए मानव को अपने धन के चार भाग बना देने चाहिए। तभी हम दोनों आध्यात्मिक और भौतिक कार्य कर सकते हैं। देखो, आध्यात्मिक विज्ञान भी पा सकते हैं और भौतिक विज्ञान भी पा सकते हैं। दोनों विज्ञान को पाने वाले तभी बनेगें जब बुद्धि से महान कार्य करेगें। देखों, जब नष्ट करने वाले अनिष्ट कार्य करेगें तो वास्तव में ही तुम्हारा जीवन समाप्त हो जायेगा। हम इस संसार में आकर कोई भी लाभ प्राप्त न कर सकेगें।

जिस गृह में जितना द्रव्य का सदुपयोग होता है, उतना ही द्रव्य उसको ममता बन करके उसे अपने कण्ठ से आलिङ्गन कर लेता है। जितना द्रव्य का दुरुपयोग होता है, एक समय मानव माया से विहीन हो जाता है। जो मानव द्रव्य का सदुपयोग नहीं करता, उसके हृदय में विडम्बना भर जाती है। एक दाह बन जाती है, वह दाह नहीं रहनी चाहिए। देखो, वाममार्ग काल है, यहां सुरा सुन्दरी में मानव लगा हुआ है। ऐसे काल में जो अपने द्रव्य का सदुपयोग करता है महान कृतियों में रत्त हो रहा है। यदि अपने जीवन को सुखी बनाना है तो अपने जीवन में धन के भाग कर देने चाहिए। (891203)

बुद्धि से विचार करके कार्य करो


श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

मुनिवरों! इस जीवन के भाग बना करके, संसार में चलो। देखो, एक अलंकार हमारे कण्ठ आ गया।

मुनिवरों! एक वैश्य कृषक था। वैश्य कृषि किया करते थे। वसन्त ऋतु में उस कृषक की कृषि लहलहा उठी। उस कृषक के क्षेत्र की ओर एक क्षत्रिय, एक ब्राह्मण और एक दरिद्र तीनों आ निकले। उन्होंने परिपक्व कृषि को देखकर उसी में से तीनों ने खाना आरम्भ कर दिया। उसी समय कृषक भी पहुंचा। उसने तीन व्यक्तियों को देखकर सोचा, कि अब क्या करना चाहिए? क्योंकि ये तो तीन हैं और मैं अकेला हूँ। अब बुद्धि से विचार कर कार्य करना चाहिए। उसने उस समय ब्राह्मण के चरणों को स्पर्श किया, और कहा कि महाराज! आप तो हमारे हर प्रकार से पूज्य है, आप तो देवता है। आप तो ब्रह्म को जानने वाले हैं। ऐसी प्रशंसा करके क्षत्रिय से कहा महाराज! आप तो हमारी रक्षा करने वाले हैं, हर प्रकार रक्षा करते हैं, आप तो हमारे राजा धिराज हैं। उसकी प्रशंसा करके कहा कि महाराज! यह आपके साथ शूद्र कौन है?

उस समय ब्राह्मण ने कहा भई! हमने तो इससे कहा था कि तू हमारे संग न चल। तब उन दोनों ने उसको त्याग दिया। तब उस कृषक ने उस पर आक्रमण करके उसको भगा दिया। फिर वह ब्राह्मण के समक्ष पहुंचा। ब्राह्मण से कहा कि आप तो हमारे देवता है पर देखिए तो यह क्षत्रिय हमें बड़े बड़े कष्ट देता है। यह आपके समक्ष क्यों आ गया? अब ब्राह्मण ने सोचा कि भई! तुम्हें तो यह दक्षिणा भी देगा, तो अब क्या करना चाहिए। ब्राह्मण ने कहा भई! मैंने तो मना किया था, तुम हमारे संग न चलो इत्यादि। तब उस कृषक ने क्षत्रिय पर भी आक्रमण कर दिया। आक्रमण के कारण क्षत्रिय भी वहाँ से चला गया।

अब केवल ब्राह्मण जी रह गए। उनको भी कृषक ने कहा कि जब आप द्वार पर आते हैं, न जाने क्या क्या पाप, भय दिखाकर अपना भाग आवश्यकता से भी अधिक अनुचित्त रूप से लेकर ही पिण्ड छोड़ते हो। इसलिए हम तो आप पर भी आक्रमण करेंगे। यह कह कर ब्राह्मण पर भी आक्रमण कर दिया। वहाँ से ब्राह्मण भी भाग गया।

मुनिवरों! इन वाक्यों का क्या अभिप्राय है? मानव को अपने जीवन के भाग बना देने चाहिए। हमारे जीवन के तीन भाग हैं बुद्धि से कार्य करो। (620401)

महापुरुष ऊंचे ऊंचे भवनों में प्राप्त नही होते।

ओ३म् उपह्वरे गिरीणां संगथे च नदीनाम्। धिया विप्रो अजायत ॥ ऋग्वेद ०८.००६.२८

इन्द्रः, विराडार्षीगायत्री, षड्जः।

पदार्थः (गिरीणाम्, उपह्वरे) पर्वतों के गहर प्रदेश में और (नदीनां, संगथे, च) नदियों के संगम में (विप्रः) वह विद्वान् परमात्मा (धिया) स्वज्ञानरूप से (अजायत) विद्यमान है॥

व्याख्याः शृङ्गी मुनि कृष्ण दत्त जी महाराज

मैं तुम्हें प्रारम्भ कर रहा था, राजन! कि महात्मा ज्ञानश्रुति की चर्चा कर रहा था, महात्मा ज्ञानश्रुति मानो देखो, वह भी जब राष्ट्रीय पद्धति में अप्रतम् देखो, राजा ज्ञानश्रुति हमारे यहाँ बड़े भव्य राजा थे और राजा के हृदय में मानो देखो, जब राष्ट्र को त्याग करके, वह आत्मज्ञान के लिए, आत्मवान बनने के लिए तत्पर होते हैं, तो राष्ट्रीयता उसी काल में ऊँची बन जाती है।

मानो देखो, राजा ज्ञानश्रुति एक समय बेटा! देखो, अपने राष्ट्र में, मंत्रियों के मध्य में मानो देखो, विद्यमान थे और मध्य में विद्यमान हो करके महाराजा ज्ञानश्रुति ने अपने मंत्रियों से कहा हे मन्त्रीगणों! मेरी इच्छा यह है कि मैं किसी महापुरुष के द्वारा अपने को समर्पित करके, मैं आत्मवान बनना चाहता हूँ। क्योंकि आत्मवान बनना बहुत अनिवार्य है राजा जब त्याग करता है, राष्ट्र का, तो उस समय वह आत्मवान बनने के लिए और राष्ट्र को जेठे पुत्र को दे करके ही देखो, वह अपने को त्यागं ब्रह्मे वह भयंकर वनों में चला जाता है।

मानो देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति के इन शब्दों को पान करते हुए, मन्त्रीगणों ने वहाँ से आज्ञा पा करके मुनिवरों! देखो, वह भ्रमण करते हुए, ब्रह्मवेत्ता के लिए सदैव तत्पर हो गये। उन्होंने यह कहा था, कोई भी ब्रह्मवेत्ता हो मानो उसके मुझे दर्शन करके, उसके चरणों की वंदना करनी है। मेरे प्यारे! देखो, सम्भव ब्रहे कृतम् मुनिवरों! देखो, मन्त्रीगण भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, राष्ट्र गृहों में पहुँचे, राष्ट्र गृहों में ब्रह्मवेत्ता को प्राप्त करने लगे, तो ब्रह्मवेत्ता नहीं प्राप्त हुआ। मेरे प्यारे! वह द्रव्यपतियों के गृहों में पहुँचे, वहाँ भी ब्रह्मवेत्ता नहीं थे, मेरे प्यारे! देखो, जब वह पुनः राजा के समीप आये, राजा से कहा प्रभु! हमें किसी ब्रह्मवेत्ता का दर्शन नहीं हुआ। तो उन्होंने कहा कहाँ गये? उन्होंने कहा, पृथ्वी तल पर, प्रत्येक राष्ट्रगृहों में, प्रत्येक द्रव्यपतियों के गृहों में, हम पहुँचे, हमें कहीं भी ब्रह्मवेत्ता प्राप्त नहीं हुआ।

महाराजा ज्ञानश्रुति बोले कि हे मंत्रियों! देखो, ब्रह्मवेत्ता तो कहीं भयंकर वनों में तुम्हें प्राप्त होगा। देखो, नदियों के तटों पर, जहाँ वे, परमपिता परमात्मा का दर्शन करते हैं आत्मवान बनने के लिए मानो जो सदैव तत्पर होते हैं वे भयंकर वनों में होते हैं। मेरे प्यारे! देखो, वहाँ होते हैं जहाँ ऋषि का आसन पृथ्वी होता है और ओढ़न उसका अन्तरिक्ष होता है और मानो दिशाएं उसके पांसे बन करके मानो देखो, उसकी कृतियों में रत्त होने वाले हो। तो मेरे प्यारे! देखो, मंत्रियों ने वहाँ से गमन किया, भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे, तो महात्मा रेवक मुनि महाराज जिनको बेटा! एक सौ पांच वर्ष तक गाड़ी के नीचे व्यतीत किए हुए हो गएं थे। अपने प्रभु का चिन्तन करते हुए, आत्मवान बनते हुए, ब्रह्मवेत्ता कहाँ बेटा! मानो किस स्थली पर ब्रह्मवेत्ता रहते हैं, जहाँ भयंकर वनों में बेटा! जलाशय गमन कर रहा हो, और वह देखो, एक सौ पांच वर्ष तक बेटा! गाड़ी के नीचे तपस्या करते करते व्यतीत हो गया था।

तो मेरे प्यारे! देखो, राज्यं ब्रहो अस्सुतम मुनिवरों! देखो, जब मन्त्री उनके समीप पहुँचे, तो महाराजा गाड़ीवान रेवक मुनि ने कहा आईए, मन्त्री जी, पधारिए। मन्त्री बड़े आश्चर्य में हुए। मन्त्री ने कहा प्रभु! आप मुझे कैसे जान गए हैं? उन्होंने कहा कि मैं आपको इसलिए जानता हूँ कि आप महाराजा ज्ञानश्रुति जो मानो देखो, मनुवंश में जो जन्मत्तं राजा है मानो देखो, वह बड़े धर्मात्मा, महान और तपस्वी हैं आप वहाँ से विराजे हैं। ब्रह्मदं ब्रह्मे मेरे प्यारे! उन्होंने स्वीकार कर लिया। मन्त्री ने कहा प्रभु! यथार्थ है। वहाँ से वार्ता प्रगट करके, कुछ ब्रह्मवाद की, महामन्त्री ने वहाँ से गमन किया और भ्रमण करते बेटा! अयोध्या में पहुँचे। अयोध्या में आने के पश्चात महाराजा ज्ञानश्रुति से कहा प्रभु! एक ब्रह्मवेत्ता का दर्शन हुआ है। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम!

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा ज्ञानश्रुति अपने अस्त्रों शस्त्रों से और आभूषणों से मानो देखो, नाना द्रव्य ले करके, वह महापुरुष के, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे, और गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा, आइये, राजं ब्रह्मे मुनिवरों! देखो, कैसे आए ब्रह्मणं ब्रह्मे? उन्होंने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने के लिए आया हूँ। उन्होंने कहा परन्तु तुम तो शुद्र हो। मेरे प्यारे! देखो, जब राजा ने यह विचारा, जब मुद्रा अर्पित करने लगे, तो उन्होंने राजा को जब शुद्र कहा तो ज्ञानश्रुति उन मुद्रा को ले करके, अपने गृह में पहुँचे।

गृह में विचारने लगे, अपनी पत्नी से बोले देवी! मैं आज देखो, ऋषि के द्वार पर पहुँचा। तो ऋषि को जब मैं द्रव्य समर्पित करने लगा, तो उन्होंने मुझे शुद्र कहा है। मुझे शुद्र की संज्ञा प्रदान की है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने विचारा कि द्रव्य सूक्ष्म है। तो मुनिवरों! देखो, बहुत सा द्रव्य ले करके, राजा ने गमन किया। ऋषि के द्वार पर ब्रह्मदं ब्रहे जब चरणों में समर्पित करने लगे, तो राजा से ऋषि ने कहा हे राजन! तुम शुद्र हो। गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने जब शुद्र कहा तो पुनः वह अपने राज्य अयोध्या में आ पहुँचे, अयोध्या में बोले कि हे देवी! मुझे तो ऋषि ने पुनः यह कहा है कि तुम शुद्र हो। उन्होंने कहा प्रभु! द्रव्य सूक्ष्म है। तो मुनिवरों! देखो, उन्होंने एक रथ को सजातीय बना करके, रथ को मानो स्वर्ण के आभूषणों से, उसे सजातीय बना करके, उसमें द्रव्य ले करके बेटा! देखो, मणि इत्यादियों को लेकर के, उन्होंने, वहाँ से गमन किया।गमन करके, जब ऋषि को जा करके समर्पित करने लगे तो उन्होंने पुनः उन्हें शुद्र कहा।

मेरे प्यारे! देखो, वे पुनः अयोध्या में आए, तो राजा अब यह जानकर, चिंतत करने लगे कि ऐसा क्यों? उन्होंने मन्त्रीगणों की एक सभा उपस्थित की, और उन्होंने कहा ऋषि ने मुझे शुद्र कहा है। द्रव्य देने के पश्चात भी, रथ सजातीय देने के पश्चात भी, मुझे शुद्र कहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणं ब्रह्मे मंत्रियों ने कहा प्रभु! कोई चिन्तन किया जाए इस सम्बन्ध में, तो एक वृद्ध सुकृत नाम के उनके महामन्त्री थे उनके पिता के समय के, उन्होंने कहा हे ज्ञानश्रुति! तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए कि तुम्हारे वंशलज में, इस मनुवंश में भी जितने भी राजा हुए हैं वह सर्वत्र ही इसी प्रकार के हुए हैं, जिन्होंने राष्ट्र त्याग करके केवल एक वस्त्र धारण करके, इन आत्मवेत्ताओं के समीप पहुँचे।

मेरे प्यारे! देखो, ज्ञानश्रुति के हृदय में यह वार्ता समाहित हो गई। उन्होंने बेटा! देखो, सब आभूषणों को त्याग करके और रथं ब्रह्मे व्रंतम् सब को त्याग करके बेटा! उन्होंने केवल एक वस्त्र धारण करके, और वह वन वृत्ति बन करके बेटा! देखो, वनचर बन करके, उन्होंने अपने राष्ट्र से गमन किया और भ्रमण करते हुए बेटा! देखो, जब ऋषि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के द्वार पर पहुँचे तो गाड़ीवान ने द्रव्यं ब्रहे राजा से कहा हे राजन! धन्यं ब्रह्मा राजप्रव्हा व्रत्यं देवो ब्रह्मणे वर्ण वासुते वेद का

महापुरुष ऊंचे ऊंचे भवनों में प्राप्त नही होते।

आचार्य कहता है कि तुम ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए आए हो, तुम ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए तत्पर हो जाओ। आओ, विराजो।

महाराजा ज्ञानश्रुति तथा नाना ऋषिवर उनके यहाँ अनुसन्धान करते रहे। मैं उसी ज्ञानश्रुति की चर्चा करने चला हूँ। जिस समय ज्ञानश्रुति ने नाना प्रकार की मुद्राओं को त्याग कर के अपना स्वरूप बनाया तो वह गाड़ीवान रेवक मुनि के द्वार पर पहुँचे। गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने उनके स्वागतार्थ ब्रह्मज्ञान की चर्चाएँ की। इस ब्रह्मवान की चर्चाएँ इससे पूर्व काल में भी उन्होंने कीं। आज भी मुझे स्मरण आ रहा है गाड़ीवान रेवक से महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा प्रभु! मैं ब्रह्मज्ञान चाहता हूँ। अपना राष्ट्र मैंने अपने ज्येष्ठ पुत्र को प्रदान कर दिया है। मैं ज्ञान और विज्ञान में रत्त रहना चाहता हूँ। देखा जब हम यह विचारते हैं कि जैसे ब्रह्म का आयतन यह विज्ञानमीय स्वरूप वाला जगत, विज्ञानमयी स्वरूप वाला वह ब्रह्म हमें दृष्टिपात आता है। तो यह जो शरीर है, यह जो प्राण पञ्च महाभौतिक तत्त्वों में रत्त रहने वाला है यह आत्मा का आयतन है। आत्मा का यह गृह माना गया है। जैसे एक एक परमाणु ब्रह्म का आयतन माना गया है। वह मानव शरीर में आत्मा भी ब्रह्म का आयतन माना गया है इसलिए वह वास कर रहा है। तो जब यह विवेचना आने लगी तो गाड़ीवान रेवक मुनि माहराज ने यह विवेचना प्रारम्भ की।

महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ, जब में नाना मुद्राएँ ले करके आपके समीप आया तो आपने मुझे यह कहा। परन्तु संसार में नाना प्रकार की माया और मुद्राओं के बिना राष्ट्र का क्रियाकलाप नहीं चलता, क्रियाशील नहीं हो पाता। याग इत्यादिओं का जो कर्म वह भी मुद्रा के बिना नहीं हो पाता। तो उससे अनभिज्ञ होने को आपने मुझे कहा। गाड़ीवान रेवक ने कहा, कहो राजन! आपके हृदय में जब यह विचार आया कि मैं ब्रह्मवेत्ता बनना चहता हूँ। हे राजन! जब तुम्हारी यह जिज्ञासा थी तो द्रव्य का कोई समन्वय नहीं रह पाता। जब उन्हाँने यह कहा तो महाराजा ज्ञानश्रुति ने कहा, प्रभु! ज्ञान और माया का प्रायः समन्वय रहता है। मानव का जो शरीर है यह पञ्च महाभौतिक है यह माया के गुणाध्यान कहलाया गया है इसी प्रकार यह सर्वत्र ब्रह्माण्ड और राष्ट्र में एक ही क्रियाकलाप हो रहा है। महाराजा ज्ञानश्रुति के वाक्य को पान करके गाड़ीवान रेवक ने कहा, हे राजन! जब तुम मेरे समीप मुद्रा ले करके आए तो ब्रह्म में मुद्रा का कोई समन्वय नहीं होता। रहा विचार यह कि तुम्हारा पथ यह कहता है कि माया कृतियों में भी निष्पक्ष हो करके मानव निर्बन्धन हो करके इसमें रमण कर सकता है और तुमने ऐसा वर्णन कराया कि यही जानना चाहते हो। परन्तु मैंने इसलिए शुद्र कहा कि तुम ब्रह्मवेत्ता को अपनाना चाहते थे, स्थापित करना चाहते थे ओर उस ब्रह्मवेत्ता की इच्छा नहीं है, जब इसकी इच्छा नहीं है तो देने वाला भी क्षुद्र के तुल्य है और यही लक्ष्मी तो चञ्चल है ही जो मानव को कहीं का कहीं ले जाती है। उन्होंने यह कहा तो गाड़ीवान रेवक मुनि के वाक्यों को पान करके ज्ञानश्रुति मौन होने लगे और उन्होंने कहा, हे राजन! तुम रथ को सजातीय बना करके तुम रथ को ले करके यहाँ आए तो तुम्हारा मन नाना कृतियों में रत्त रहने वाला नहीं था। महाराजा ज्ञानश्रुति मौन हो गए।

तो विचार क्या मुनिवरों! जब ब्रह्मवेत्ता के समीप पहुँची तो तीन समिधा ले करके जाना चाहिए। समिधा का अभिप्राय क्या? मैंने बहुत परातन काल में कहा, तीन समिधा वह होती हैं जो आत्मा को चेताने के लिए अग्नि में उद्बुद्ध की जाती हैं।

महाराजा सुखदेव और विदेह जनक



महाराजा सुखदेव और महाराजा जनक

एक समय महर्षि व्यास अपने पुत्र सुखदेव को शिक्षा दे रहे थे। पुत्र ने पिता से पूछा कि भगवन! मुझे गुरु किस काल में मिलेगा? ऋषि ने सोचा कि यह मुझे अपना गुरु नहीं मान रहा है। इसलिए उससे कहा कि तुम राजा जनक के द्वार पर जाओ, वह तुम्हारे गुरु बनेंगे। इस वाक्य को पान करके वह वहाँ से जनक नगरी में जा पहुंचे, और द्वारपाल से कहा कि राजा से कहो, कि एक सेवक आया हुआ है। द्वारपाल ने राजा से जा कहा, राजा जनक ने योगबल से देखा, कि अरे, यह तो सुखदेव आया हुआ है और कहा कि उसे वहीं रहने दो। कहते हैं, कि उन्हें उसी प्रथम द्वार पर एक दिवस और एक रात्रि हो गई, परन्तु स्थिर रहे। उदारता उनके अन्तःकरण में समाहित हो चुकी थी।

द्वितीय काल द्वारपाल ने राजा जनक से कहा कि महाराज! वह तो वहीं स्थिर है। उन्होंने कहा कि अच्छा आने दो। द्वारपाल ने आज्ञा दी, परन्तु द्वितीय द्वार आया, तो द्वितीय द्वारपाल से कहा कि इसे यहीं रहने दो। द्वितीय द्वार पर एक दिवस और एक रात्रि इसी प्रकार स्थिर रहे, अपनी उदारता को भङ्ग नहीं किया। तृतीय समय हुआ तो द्वारपाल से कहा कि इसे तुम स्थिर कर लेना। वहाँ भी वह एक दिवस और एक रात्रि, इसी प्रकार स्थिर रहा। अन्त में राजा के द्वार जा पहुंचा और राजा के चरणों में ओत प्रोत होकर कहा, कि भगवन! मुझे ज्ञान दो। उसके लिए मैं आपकी शरण में आया हूँ।

मुनिवरो! मान अपमान नहीं था। इतने परम हंस जिसका कोई प्रमाण नहीं। अब राजा ने सोचा कि एक तो इसकी परीक्षा हो चुकी, परन्तु एक परीक्षा रह गई है। उन्होंने एकान्त में स्थिर कर दिया और नाना अप्सराओं से कहा, कि इसकी परीक्षा करो। उस समय नाना अप्सराएं नग्न होकर के उस ऋषि बालक के द्वार पर पहुंची और उसे नग्न कर दिया, परन्तु वह उदारता में डूबे हुए थे, वैराग्य हो चुका था,

परमात्मा में ललाहित था, उसके आनन्द में मग्न था, वह उसी प्रकार रहा और रात्रि समाप्त हो गई। राजा जनक ने सब अप्सराओं से पूछा, तो कहा कि महाराज! आपने हमें कहाँ स्थिर कराया, वह तो इतना उदार है, कि उसकी उदारता का कोई प्रमाण नहीं। राजा प्रसन्न हुए और सुखदेव से कहा कि तुम अब योग्य हुए। बालक उस रात्रि तुमने क्या देखा? उन्होंने कहा कि प्रभु! मैं कुछ नहीं देख रहा था, केवल यह देख रहा था, कि आज तेरे समक्ष तुझे नष्ट करने वाली मृत्यु तेरे निकट आ रही है। मैंने इन नेत्रों से और कुछ पान नहीं किया। आज मैं आपकी कृपा से मृत्यु से विजयी बन गया हूँ।

मुनिवरो! इसका नाम उदारता है। संसार में उदार वह हो सकता है, जो ज्ञान में डूबा हुआ हो। आज हम प्रभु से याचना कर रहे थे, कि हे प्रभु! तू मुझे अपनी उदारता दे और उदार रहूँगा, तो संसार में कुछ कर सकूंगा। यदि मेरे द्वारा उदारता न रही, तो प्रभु! मेरा जीवन नष्ट हो जाएगा। यह है आज का हमारा उपदेश। अब यह समाप्त होने जा रहा है।

पूज्यपाद महानन्द जीः भगवन! अभी तो आपका समय भी नहीं हुआ है।

पूज्यपाद गुरुदेवः नहीं, महानन्द जी! समय समाप्त हो चुका है। तुम्हें यह वाक्य उच्चारण करने का अभ्यास हो चुका है।6977038

एक समय बेटा! देखो, महाराजा सुखदेव जी और उनके पिता व्यास दोनो विराजमान थे। जब विराजमान थे तो वह कह रहा है ब्रह्म का उपदेश चल रहा है। तो मुनिवरों!देखो, बालक ने अपने पिता से कहा सुखदेव से कि भगवन! मैं तो ब्रह्म विद्या को पान करना चाहता हूं। मेरा गुरु निर्णित कर दें। व्यास ने विचारा यह मुझे यह अपना गुरु स्वीकार नही कर रहा है। इससे मेरा कर्तव्य है कि मैं इस ब्रह्मचारी का मानो आचार्य और गुरु के कुल में प्रवेश कराऊं। उन्होंने कहा बालक तुम्हारे आचार्य जो गुरु बनेंगे, वह राजा जनक बनेंगें। मेरे प्यारे! अब वह वहां से गमन किया उन्होंने न कोई वस्त्र विवेकी पुरुष था जन्म जन्मान्तरों के संस्कारों को ले

करके महाराजा सुखदेव संसार में आए, कैसे विवेकी थे मेरे प्यारे! वह भ्रमण करते हुए राजा जनक पर जा पंहुचें राजा जनक एक द्वार पर विराजमान थे। तो मुनिवरों!देखो, महाराजा सुखदेव ने ब्रह्मचारी ने द्वारपालों से कहा कहो राजा से ब्रह्मवेत्ता से कहो विदेह से क्या तुम्हारे आश्रम में तुम्हारे द्वार पर मानो एक जिज्ञासु है। मेरे प्यारे! वह द्वारपालों ने वहां से गमन किया भ्रमण करते हुए जनक के समीप पंहुचें। जनक ने कहा क्या कार्य है? उन्होंने कहा प्रभु! एक ब्रह्मचारी विराजमान है जिज्ञासु सुखदेव उनका नामोकरण है। उन्होंने कहा बहुत सुन्दर मेरे प्यारे! उन्होंने कहा इसी द्वार पर उन्हे रहना चाहिए, आज की रात राजा जनक का यह आदेश था इसी आदेश को उन्होंने महाराजा सुखदेव को कथन कराया। उनको ले करके वह शान्त मुद्रा के साथ वेदमन्त्रों का पठन पाठन करते रहे। एक रात्रि व्यतीत हो गई एक द्वार समाप्त हो अगला द्वार, वहां से राजा जनक ने आज्ञा दी द्वार को त्याग दो ब्रहे आन्तरिक द्वार पर आ जाओ, मेरे प्यारे! वह आन्तरिक द्वार पर पंहुचें द्वारपाल से कहा कहो राजा विदेह से तुम्हारे यहां एक जिज्ञासु पधारे हैं। और उनसे क्या आज्ञा है मेरे प्यारे! राजा के द्वार पर जब सेवक पंहुचें। उन्होंने कहा मानो एक रात्रि और एक दिवस मानो एक स्थली पर विराजमान होना है। तो मुनिवरों! देखो, महाराजा जनक ने तीन ही रात्रि तीन ही दिवस उन्हे स्थिर किया ना अन्न है, ना जल है वह केवल जलों से ही निर्वाह कर रहे हैं। राजा ने कोई वार्त्ता नही कि की तुम जल पान करोगे। अन्न इत्यादि पान करोगे। मेरे प्यारे! तीन रात्रि और तीन दिवस हो गए। उसके पश्चात वह राजा के द्वार पर पंहुचें सुखदेव ने राजा के चरणों को छुआ, और राजा ने उसे आशीर्वाद दिया तो महाराजा सुखदेव की यह परीक्षा थी कि यह तीन रात्रि तीन दिवस तीन द्वारों पर विराजमान रहेगा। मानो देखो, यह जो द्वार पालं ब्रहे अब मैं उनको विजय करके आया हूं। मेरा कर्तव्य है माता के द्वार पर मानो देखो, गुरु माता होता है उनके चरणों में ओत प्रोत हो गया। राजा ने अपने हृदय से हृदय आलिंगन कर लिया। उसने कहा धन्य

है यह ब्रह्मचारी विद्या का सुपात्र है। मेरे प्यारे! वह उसके पश्चात उन्हे ब्रह्म का उपदेश देने लगे। एक समय महाराजा सुखदेव को शंका उत्पन्न होने लगी। उन्होंने कहा कि आपके द्वारा यह राष्ट्र है संसार का वैभव मानो देखो, आपकी पत्नी भी है। आप भगवन इसके हेतु आप कैसे इस संसार में ब्रहे मुझे यह शंका है। आपको विदेह कैसे कहा जाता है। तो मेरे प्यारे! जब उन्होंने यह वाक प्रगट किया, राजा ने कहा बहुत सुन्दर वह मौन हो गए। उत्तर नही दिया एक दिवस बेटा! मानो देखो, अग्नि प्रदीप्त हो रही है यज्ञशाला में एक स्थान में उनकी पत्नी विराजमान है और नेत्रों से उन्मुख होता हुआ ब्रह्मचारी सुखदेव ब्रह्म का उपदेश पान कर रहा है। मेरे प्यारे! अग्नि में उससे अग्नि मानो देखो, हस्तों में अग्नि प्रदीप्त होने लगी, राजा को ज्ञान, मानो एक स्थली में पत्नी है कण्ठ से ऊर्ध्वा भाग में उसका हस्त है। तो राजां ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, उस समय सुखदेव जी ने यह दृश्य पान किया। जब उनका हस्त अग्नि में प्रदीप्त होने लगा। तो सुखदेव ने राजा के हस्त और चरणों को स्पर्श करके कहा भगवन! यह क्या हो रहा है। राजा ने कहा अरे, तुम यह दृष्टिपात कर रहे हो, उन्होंने कहा हां प्रभु! उन्होंने कहा यहीं शान्त हो जाओ। मानो मैं इस वैभव को इस प्रकार भोगता हूं, मानो मेरे हृदय में द्रव्य की पिपासा है और एक स्थली में मेरा उपदेश हो रहा है ब्रह्म का उपदेश चल रहा है। मेरा मन, कर्म, वचन सर्वत्र मानो देखो, तुम्हारी व्याख्या ब्रह्म की व्याख्या करने में लगा हुआ है। मुझे इस भौतिकवाद का उस समय ज्ञान नही है। मुझे इसीलिए विदेह कहते हैं विदेह का अभिप्रायः जो इस संसार को भोग रहा है उसमें लिपायमान नही है। तो मुनिवरों! देखो, राजा जनक उस समय मौन हो गए। देवी भी मौन हो गई। तो एक दिवस मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मणे ऋतप्रव्हा राजा ने आज्ञा दी ब्रह्मचारी यह घृत का पात्र है। यह गो घृत मानो मेरे इस नगर की सर्वत्र की मानो देखो, भ्रमण करो और मुझे दृष्टिपात कराओ मेरे नगर में क्या है। मुनिवरों! और एक स्थली में घृत का पात्र लिया कहा यदि एक घृत का बिन्दु भी इसमें से समाप्त हो गई। तो तुम्हारे मानो

देखो, तुम्हारे प्राणों का अन्त कर दिया जाएगा। यह तो मुनिवरों! देखो, वह सर्वत्र मानो देखो, नगर का भ्रमण कर रहा है। और घृत पर उसका मन वचन कर्म लगा हुआ है। नेत्र लगे हुए हैं, मन लगा हुआ है घृत प्राण ले जाए कहीं घृत का एक बिन्दु भी चला गया तो तेरी मृत्यु हो जाएगी, मेरे प्यारे! सर्वत्र नगरी का भ्रमण कर आए मानो देखो, मिथिलापुरी का दर्शन कर आया परन्तु मिथिला नगरी का यह ज्ञान नही है। कहां राजा रहता है कौन सा उसका स्थल कहां कहां है सर्वत्रता भ्रमण कराने के पश्चात राजा ने कहा कहो सुखदेव! तुमने क्या दृष्टिपात किया। उन्होंने कहा प्रभु! मुझे इस नगरी का कोई प्रतीत नही चला। क्योंकि मैं इस मृत्यु के भय से मैं तुम्हारी इस नगरी में, इस संसार में स्थापित नही कर सका। तो मेरे प्यारे! मानव वह कहलाता है संसार में जो मुनिवरों! देखो, अपनी मृत्यु को आलंगिन करता है मुनिवरों! वह घृत का पात्र मानो एक घृत के बिन्दु के चले जाने पर जहां प्राणों का चले जाने का भय है। इसी प्रकार हे मानव! तेरा भी यह कर्तव्य है। क्या तू संसार में इस संसार को भोग परन्तु त्याग तपस्या के साथ और कैसे भोग जैसे जनक भोगता है। जैसे सुखदेव से मानो हस्त में घृत का पात्र है नगरी को दृष्टिपात कर रहा है नगरी भ्रमण कर रहा है परन्तु नगरी में यह प्रतीत नही नगरी में क्रियाकलाप किस प्रकार का है मेरे प्यारे! इस प्रकार संसार का उपभोग करना चाहिए। तो यहां विचार विनिमय क्या मैं बेटा! अपने विचारों को बहुत दूरी ले गया विचार क्या बेटा! इसका नाम है निर्वाचन हमारे यहां मेरे प्यारे! महानन्द जी ने विचार व्यक्त करते हुए कहा था जब गुरु शिष्यों का निर्वाचन नही होता जहां गुरु शिष्यों का निर्वाचन नही होता वहां पठन पाठन की पद्धति भी भ्रष्ट हो जाती है। मानवीय पद्धति भी भ्रष्ट हो जाती है। और उसका परिणाम मानो एक दूसरे में चिन्ता हो जाती है। एक दूसरा मानव प्रत्येक क्षेत्र चिन्तित होता है। उसका परिणाम यह होता है कि वह समाज न होने के तुल्य बन जाता है। तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय क्या कि हमारे यहां निर्वाचन होना चाहिए। निर्वाचन का अभिप्रायः क्या मेरे प्यारे!

देखो, जब यहां आचार्य के कुल में ब्रह्मचारी पंहुचे तो ब्रह्मचारी का निर्वाचन होता है मस्तिष्कों का मन्थन होता है विचार विनिमय ऊर्ध्वा गति वाला हो तो मेरे प्यारे! वह हमारे लिए बहुत ही प्रियता है।

हास्य... विचार विनिमय क्या बेटा! हमे विचार विनिमय करना चाहिए हमे उस क्षेत्र में जाना चाहिए। जिस क्षेत्र में जाने के पश्चात मानवीय पद्धति ऊर्ध्वा गति को प्राप्त होती है मानो जब इस प्रकार का समाजिक पद्धति होती है। इस प्रकार का निर्वाचन होता है तो मेरे प्यारे! वहां अज्ञान क्यों रहेगा। और जहां अज्ञान नही रहेगा वहां प्रकाश रहेगा। जहां ज्ञान और प्रकाश होगा वहां बेटा! अन्धकार नही रहेगा। वही मानो देखो, स्वर्ग की उद्घोष करता है मानो वहीं अपने में सौभाग्य और राष्ट्र समाज सर्वत्र चिन्ता से मानो अचिन्तावादी बन जाते हैं चिन्ता से रहित हो जाते हैं। तो अभिप्रायः क्या बेटा! देखो, चिन्ता उस काल में होती है जब न तो ब्राह्मण होते हैं, न क्षत्रिय होते हैं, न वैश्य होते हैं। जब मानव का उदर ही भ्रष्ट हो गया। जब राष्ट्र का समाज का उदर समाप्त हो गया तो बेटा! निर्वाचन कौन करेगा। मुनिवरों! देखो, जब वैश्य संग्रह करने वाला बन जाता है। क्षत्रिय उसके वैभव को अपने में सीमित करना चाहता है। ब्राह्मण मेरे प्यारे! अपने तन अपनी ब्रह्म विद्या को त्याग देता है। नामोकरण के ब्राह्मण अवसुत रह जाते हैं वहां रक्तभरी क्रान्ति के अवाशेष बन ही जाते हैं मैंने बहुत पुरातन काल में प्रगट करते हुए कहा था कि समाज को ऊंचा बनाना है मानो ऊर्ध्वा गति में ले जाना है मेरे प्यारे! आज मैं उन विचारों को व्यक्त नही कर रहा हूं। विचार विनिमय क्या कि हमारा जीवन त्याग तपस्या में परिणत हो, निर्वाचन सुन्दर हो जिससे मेरे प्यारे! महानन्द जी का जो उद्देश्य वेदनामयी है वह पूर्ण होता चला जाएगा। आज का विचार विनिमय क्या कि हमारे यहां निर्वाचन होना चाहिए, जब निर्वाचन होता है। गृह आश्रम का भी निर्वाचन होता है। मेरे प्यारे! यहां प्रत्येक स्थली में निर्वाचन होता है। उस निर्वाचन में जो मानव समाज को लाना चाहता है तो स्वर्ग है। निर्वाचन यदि ऊर्ध्वा गति का नही होता तो वही

नारकिक संन जाता है बेटा! आज का विचार विनिमय यह समाप्त। कल मेरे प्यारे! महानन्द जी की पुनः से वेदना है कुछ वाक प्रगट करने की तो कल कुछ उनका वाक् भी होगा हमारा विचार विनिमय भी होगा। मेरे प्यारे! आज का विचार विनिमय क्या क्या निर्वाचन सुन्दर हो राष्ट्रीय पद्धति ऊंची हो, वैश्य सुन्दर हो, क्षत्रिय क्षात्र में प्रवृत्ति वाला हो ब्रह्मचर्य आश्रम में त्याग और तपस्या होनी चाहिए। यह आजका हमारा वेद का उपदेश है समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं प्रगट करेंगे आजका वाक समाप्त अब वेदों का पाठ होगा।

वर्तमान में संसार की स्थिति



मुनिवरों! द्वापरकाल में एक समय महात्मा विदुर धृतराष्ट्र के द्वार पर पहुँचे। महाराज धृतराष्ट्र ने उनका ऊंचा किया और कहा कि हे महात्मा विदुर! मुझे वर्णन कराइए कि संसार कैसा है?

महात्मा विदुर ने कहा कि महाराज! आज का संसार विलक्षण है, यह एक भयंकर वन है। जहां भयंकर अग्नि प्रज्वलित हो रही है सिंह और हाथी अपनी ध्वनि कर रहे हैं। मनुष्य इन्हें विचारता तो वहां से भयभीत होकर तीव्र गति से अपने स्थान को आने लगता है और उस वृक्ष पर आ जाता है, जो जलाशय के तट पर है, यहां देखता है कि जलाशय के तट पर एक सर्प उनके निकट आता चला जा रहा है, उस सर्प से वह भयभीत होने लगता है और तभी देखता है कि जिस वृक्ष पर विराजमान है उस वृक्ष को छः मुखों वाला हाथी निगलता चला जा रहा है और इस वृक्ष की डाली को एक सफेद वर्ण वाला और दूसरा काले वर्ण वाला चूहा काटते चले जा रहे हैं।

आगे और गंभीरता से देखता है तो क्या देखता है कि जिस वृक्ष पर वह विराजमान है उस पर मधु छत्ता है और मधु गिर रहा है। मनुष्य उस मधु के आनन्द में मग्न है, महाराज!। यह है आज के संसार का मनुष्य।

महाराज धृतराष्ट्र ने कहा कि इसको मुझे अच्छी प्रकार वर्णन कराइए। इसका स्पष्टीकरण करते हुए विदुर ने कहा कि जब मनुष्य माता के गर्भस्थल में रहता है, तो वह भयंकर वन है, जहां प्राण रूपी हाथी अपनी ध्वनियां कर रहे हैं और रक्त रूपी अग्नि प्रज्जवलित हो रही है। उस समय यह मनुष्य प्रभु से याचना करता हुआ इस संसार रूपी वृक्ष पर आ जाता है, इसके पश्चात वह देखता है।

सर्प रूपी मृत्यु उसके निकट चली आ रही है और गम्भीरता से देखता तो क्या? कि छः मुखों वाला हाथी इस वृक्ष को निगलता चला जा रहा है। यह छः मुख वाला हाथी संवत्सर है जिसमें बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत और शिशिर छः ऋतुएं हैं जो इस संसार रूपी वृक्ष को निगलता चला जा रहा है और गम्भीरता से क्या देखता है कि इस वृक्ष की डाली को जिस पर वह बैठा है, श्वेत व काले

वर्ण वाले दो चूहे काटते जा रहे हैं। यह श्वेत व काले वर्ण वाले चूहें दिन और रात हैं। इसके पश्चात और भी गम्भीरता से देखता है, काम, क्रोध, मद, लोभ और मोह रूपी मधु टपकता छत्ता है जिस मधु के आनन्द में यह मनुष्य मृत्यु को भूला बैठा है।

तो मेरे प्यारे ऋषि मण्डल! मेरे प्यारे भद्र मण्डल! आज मानव को ऊंचा बनना है, इस मधु रूपी छत्ते को शांत करना है, मृत्यु जो शनैः शनैः तुम्हारे निकट आ रही है इससे बचने के लिए तुम्हें ज्ञान रूपी प्रकाश को पाना है। संसार में मानव जो भयभीत होता है, वह मृत्यु से होता है। सदा यह कल्पना करता रहता है कि मेरा यह शरीर न चला जाए।

महान विचारक और दार्शनिकों को भी यह प्रकृति अपने में धारण कर लेती है। उनकी प्रवृत्तियों में भिन्नता दृष्टिपात आती है।

मानव जैसा भी इस प्रकृति के आवेशों में आकर अपने विचार और संस्कार बना लेता है, उसके अनुकूल उसके आवागमन की प्रतिभा भी बन जाती है। मानव अपने कृत्यों से आवागमन बनाता है। किसी दूसरे के कर्म से आवागमन नहीं बनता। (640421)

संसार एक कल्प वृक्ष



श्रृङ्गी मुनि कृष्णदत्त जी महाराज

बेटा! एक समय देव ऋषि नारद इस मृत मण्डल में आ गए, तो उन्होंने विचारा, कि मैं किसी प्राणी को स्वर्ग में ले चलूंगा। तो जब वह आकर इस संसार में भ्रमण करने लगे, तो देखो, एक मनुष्य बड़ा दुःखित हो रहा है। ऐसा कहते हैं, कि उसकी पत्नी उसे नित्य प्रति दण्ड दिया करती थी। प्रातःकाल में उसे दण्ड दिया। वह मानव बड़ा दुःखित हो रहा था और वह प्रभु से याचना कर रहा था कि प्रभु! अब मैं जीवन नहीं चाहता केवल मृत्यु चाहता हूँ। देव ऋषि नारद बोले यह मनुष्य तो बड़ा दुःखित हो रहा है और उससे कहा कि चलो, आज मैं तुम्हें स्वर्ग में ले चलूं। वह प्राणी बोला चलिए, भगवन!।

अब नारद मुनि और वह मानव दोनों भ्रमण करते हुए स्वर्ग के द्वार पर जा पहुंचे। स्वर्ग के द्वार पर जा करके नारद मुनि ने कहा देखो, भई! यह स्वर्ग का द्वार है, मैं भगवान विष्णु से आज्ञा लेने जा रहा हूँ, तुम इस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो जाओ और यहाँ सुन्दर प्रभु का चिन्तन करो। नारद मुनि तो स्वर्ग में जा पहुंचे और वह मानव उस कल्पवृक्ष के नीचे विराजमान हो गया, जहाँ मन्द सुगन्ध वायु चल रही थी। मानव के मन में कल्पना होती है, कि अरे, यह तो बड़ा सुन्दर स्थान है, यहाँ तो तेरे लिए एक आसन होना चाहिए था। अब बेटा! वह जो कल्पवृक्ष था, कल्पना करते ही एक सुन्दर आसन लग गया। उस आसन पर विराजमान हो गया। जब ऐश्वर्य ने उसे लालायित कर दिया, तो उस मनुष्य के मन में कल्पना जागी, कि यहाँ तो मेरे लिए विश्राम करने वाला आसन भी होना चाहिए था। अब कल्पना की, तो आसन लग गया। उस आसन पर विराजमान हो गया। विराजमान होने के पश्चात अब उस मनुष्य के मन में कल्पना आई, कि अरे, यहाँ तो नाना अप्सराएं होनी चाहिएं थी, ऐश्वर्य के लिए। अब कल्पना करते ही, वहाँ ऐश्वर्य के लिए अप्सराएं भी आ पहुंची। इतने में उस मनुष्य के मन में कल्पना जागी, कि यदि मृत लोकवाली अब पत्नी होती, तो तेरे ऊपर डण्डा होता। अब कल्पना करते ही मृत्यु लोक वाली पत्नी भी आ पहुंची, डण्डे सहित। अब मानव बड़ा दुःखित हुआ। आगे वह मानव और उसके पश्चात उसकी पत्नी जी, दीर्घ गति से भ्रमण कर रहे हैं।

तो इतने में नारद मुनि जी आ पहुंचे और उन्होंने दीर्घ वाणी में कहा, कि अरे, यह क्या? कल्पना को त्याग। उस मनुष्य ने कल्पना को त्यागा। कल्पना के त्यागते ही न तो पत्नी जी हैं, न अप्सराएं हैं न आसन है केवल वही कल्पवृक्ष विराजमान है। देव ऋषि नारद मुनि ने कहा, अरे, महामूर्ख! अब तुझे इस कल्पवृक्ष के नीचे कल्पना ही करनी थी, तो यहाँ भी तूने अशुद्ध कल्पना की। अरे, यदि तू यहाँ ऋषि बनने की कल्पना करता, तो ऋषि बन जाता। यदि देवता बनने की कल्पना की होती, तो देवता बन जाता।

तो मुनिवरों! वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या? कि यह जो सर्वश जगत है, यह एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। यहाँ मानव आया है, ऊँची से ऊँची कल्पना करने के लिए। यहाँ तुम्हें कल्पना करनी है, कर्म करने हैं, अशुद्ध कर्म करोगे, परन्तु कर्म किए बिना तो रह नहीं सकते, इसलिए तुम्हें मुक्ति के लिए कर्म क्यों नहीं करने चाहिए? तो वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय यह है कि आज प्रभु के जगत में, प्रत्येक प्राणी साधक बनने के लिए आया हैं, साधक बनना है। यदि कोई मानव यह कहने लगे कि जब तक संसारी भोगों में प्रवृत्ति है, जगत में प्रवृत्ति है, वह साधक है, तो वह मिथ्या वाक्य उच्चारण करता है। वास्तव में संसार में प्रभु की सृष्टि में प्रत्येक प्राणी साधक ही बना रहता है। साधना करना उसका जन्मसिद्ध अधिकार है। साधना करनी चाहिए। यही आज का हमारे वाक्यों का अभिप्राय है, हमें मन को, जो प्राण शक्तिशाली है, उसकी, उसमें प्रार्दुभावता, उसमें उसका सन्निधान कर देना चाहिए। (690411)

इस संसार को देखो यदि कल्पवृक्ष कहा जाए, तो वहां पूर्णत्व है। यदि इस संसार को विचारशाला कहा जाए, तो वह भी सम्भव है। यदि इस ससार को लेने-देने की व्यापारशाला कहा जाए तो यह भी . मानो सम्भवता को प्राप्त होती है। यदि हम स्वीकार कर लें कि यह संसार एक संस्कारों का समूह है तो वहां भी यह वाक्य पूर्णता को प्राप्त होता है। यदि इस संसार को यह स्वीकार कर लें कि यह एक नृत्यशाला है। यहां मानव जीवन-मरण के लिए आता है। इसके ऊपर विवेचना भी पूर्णता को प्राप्त हो जाती है। परन्तु किन्हीं आचार्यों ने कहा है कि नहीं यह जो संसार है, एक प्रकार की यज्ञशाला है, क्योंकि प्रत्येक मानव यहां सुक्रियाकलाप करने के लिए आया है और विचारता रहता है कि मेरा जीवन सु बन जाए, पवित्रता में परिणत हो जाए। दर्शनिक कहता है कि यह मृत्युलोक है, जहां प्रत्येक मृत्यु से विजयी होने आया है। आज हम यहां लोक-लोकान्तर की कल्पना प्रकट करने लगते हैं परन्तु एक अपने प्रभु की सुन्दर कल्पना नहीं करते, जिसके अन्तर्गत सभी अपनी-अपनी प्रक्रिया करते हैं। (811203)

प्रजापति द्वारा द का उपदेश



परमपिता परमात्मा की महिमा एक एक कण कण में व्याप्त

जीते रहो, देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भान्ति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे यह भी तुम्हे प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस महामना परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा महिमावादी है और उसकी महिमा एक एक कण कण में व्याप्त है। जब हम उस परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन करने लगते हैं अथवा वह स्मरण आने लगती है तो अन्तरात्मा गद गद हो जाता है। हमारा वेदमन्त्र कहता है मनम् ब्रह्मा मना वासुतम् वेदमन्त्र कहता है हे मानव! तू उस परमपिता परमात्मा की आनन्दमयी ज्योति को जानने का प्रयास कर क्योंकि वह परमपिता परमात्मा ज्योतिवान है। उस परब्रह्म की ही ज्योति मानो चहुं ओर ओत प्रोत हो रही है और उसका ज्ञान और विज्ञान भी नितान्त माना गया है। परन्तु जब हम यह विचारते रहते हैं कि अम्रतं ब्रह्मा हमारे यहां नाना प्रकार के कथानक विचार आते रहते हैं।

प्रजापति

बेटा! हमारे यहां प्रजापति का नामोकरण आता रहा है। वैदिक साहित्य में प्रजापति नाम राजा का भी है और परमात्मा को भी प्रजापति कहा जाता है जो प्रजा का स्वामी है। मानो देखो, जो उसको गृह बनाए रहता है। तो उस परमात्मा का नाम प्रजापति है। प्रजापति नाम राजा का भी है जो प्रजा का पालक है मानो देखो, राजन मम् ब्रव्हा प्रजा वह प्रजापति कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, यह जो परमपिता परमात्मा प्रजापति है वह प्रजा का नेतृत्व करने वाले हैं प्रजा का पालन

करने और वह पालना में सहयोगी बने रहते हैं परन्तु यह विचार आता रहता है कि केवल ब्रह्मा अस्सुतम् यह कल्याण के लिए नाना प्रकार की वार्ताएं प्रगट करते रहे हैं। तो एक समय बेटा! प्रजापति के द्वार पर प्रायः देवताजन जाते थे और वह देवत्म ब्रव्हा देवत्व की आभा और देवत्व को प्राप्त करके मानो अपने अपने आसनों पर विद्यमान होते रहे हैं।

देवताओं को उपदेश

मेरे प्यारे! एक समय यह तीन प्रकार की जो वृत्तियां है, सबसे प्रथम देवता, मानव दानव यह तीनों मुनिवरों! देखो, प्रजापति के द्वार पर पंहुचेंऔर प्रजापति से कहा हे प्रभु! हम अपने कल्याण के लिए आप से कुछ उपदेश पाना चाहते हैं जिससे हमारा कल्याण हो। ऐसा मुनिवरों! देखो, स्मरण है कि प्रजापति ने कहा आओ विराजो, वह विराजमान हो गए, तो प्रजापति ने कहा प्रव्हा कृतम् देवताजन जब देवताओं के समीप आए तो उन्होंने द,द,द एक उपदेश दिया और उन्होंने जब द का उपदेश दिया देवताजन गमन करने लगे, तो प्रजापति ने कहा कि तुमने द से क्या प्राप्त किया है? उन्होंने कहा कि द से मानो दमन। तुम जो भी मानव संसार में दमनशील रहेगा वही देवता है और दमनशील किसे कहा जाता है? जो मानव इन्द्रियों का दमन करता है इन्द्रियों पर जय रखने वाला है वह देवता है और वह दमनशील है। मानो देखो, इन्द्रियों पर जो जय विजय करने वाला है अथवा उसको दमन करता है वह देवता कहलाता है तो देवताओं को प्रजापति ने यह उपदेश दिया, कि द,द,द क्या तुम द को लेकर के अपने जीवन को ऊंचा बनाओ।

मुनिवरों! देखो, उन्होंने एक मन्त्रणा की और यह कहा कि देवां भूतं देवत्वां ब्रह्मा। वेदमन्त्र भी यह कहता है कि देवता वही है जिसकी मानसिक प्रवृत्ति मन मस्तिष्क मानो एकाग्र रहने वाले हैं और मन व मस्तिष्क के द्वारा ही मुनिवरों! देखो, परमात्मा का मनन और चिन्तन करता है। वह देवत्व में देवता है और देवता मुनिवरों! देखो, वह जो देवं ब्रह्मा जैसे देखो, वह याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा है, शतपथ

ब्राह्मण की रचना करते हुए उन्होंने कहा कि देवं ब्रह्मा देखो, वह जब यह याग और देखो, अपनी आभा पर सुगन्धि मुनिवरों! मेरे प्यारे! देखो, अमृतम् वह यज्ञ के दस पात्रों में समा ही जाती है। और वह जो धर्म है वह धर्म ध्वनि कहलाती है जिस ध्वनि को अपना करके मुनिवरों! देवता बने हैं और मन पवित्र बनता है, मस्तिष्क ऊर्ध्वा में गमन करने लगता है। तो मेरे प्यारे! देखो, वह द,द,द, कहलाता है। देवता कौन है जो दमनशील रहने वाले हैं देखो, जो दमन ब्रह्मा व्रतम् इन्द्रियों पर दमन करते हैं।

मानव को उपदेश

मेरे प्यारे! देखो, इतने में मानव आये और मानव ने कहा प्रभु! हमारे कल्याण के लिए कोई मार्ग दीजिए। तो उन्होंने कहा कि द,द,द, जब द का उपदेश दिया तो जब वह गमन करने लगे मानव तो प्रजापति ने कहा हे प्रजाओं! तुमने क्या जाना है? तब मानव ने कहा हे प्रभु! आप ने कहा कि देखो, देवत्म ब्रह्मा दमन दम ब्रहे देखो, द से दान है क्या प्रत्येक मानव को संसार में दानी बनना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, दान की जो प्रवृतियां है वह मानव के हृदय में ही उत्पन्न होती हैं और वह कहता है कि जो दानाः दाप्तां देवः जो देखो, दानम् अपने हृदय से कोई ब्रह्मज्ञान दे रहा है वह ब्रह्म दान सर्वदानम् कहलाता है। मेरे प्यारे! देखो, कोई अन्नाद दानं ब्रह्मे ब्रह्मज्ञान को जो उपदेश देता है अथवा ब्रह्मज्ञान देता है वह दानी है और वह दान दे करके ही मुनिवरों! देखो, अपनी प्रवृत्तियों को ऊंचा बनाता है।

महाराजा बलि का दान

मेरे प्यारे! देखो, वह मानव दानी है और दान के द्वारा ही जैसे मुनिवरों! देखो, जैसे महाराजा बलि ने महाराजा बलि ने जब दान की प्रतिभा अवरणम् हमारे यहां बलि नाम मेरे प्यारे! देखो, वह वामन अवतार को उन्होंने मुनिवरों! देखो, अमृतं ब्रव्हे वह सर्वत्र देखो, भु र्भुवः स्वः दान कर दिया था। मेरे प्यारे! वामनावतार को तो महाराज देखो राजा बलि कौन है जो दानम् है मेरे प्यारे! देखो, जो दान देने

वाला देखो, वह प्रजापति ब्रह्मणा और राजा बलि जो मेरे प्यारे! देखो, वामन अवतार को दान देता है। मेरे प्यारे! देखो, बलि अमृतम् राजा बलि को कहा जाता है। राजा बलि मुनिवरों! देखो, उनकी पत्नी का नाम विध्यांचल था और विध्यांचल ने उनकी प्रेरणा से देखो, सर्वत्र दान प्रदान कर दिया। याग किया तो मुनिवरों! देखो, जब दान देने लगे तो उन्होंने दान में सबसे प्रथम मानो देखो, त्रिवाम् ब्रह्मा तीन पगों में मुनिवरों! देखो, ब्रह्माण्ड को माप लिया। सबसे प्रथम एक पग में भू मण्डल को मापा द्वितीय में भुवः को और तीसरे में मुनिवरों! देखो, स्वः मण्डल को माप लिया। तो विचार आता है बेटा! यह चाहे अलंकारिक वार्ता है क्योंकि अलंकार हमारे यहां एक विशिष्टता में परणित किया गया है। देखो, राजा बलि नाम बलि नाम मेरे प्यारे! वर्णास्सुतम् ब्रह्मा व्रतम्। रात्रि को बलि कहा जाता है और मुनिवरों! देखो, उसका जो अन्धकार है वह है विध्यांचली है और मुनिवरो देखो, प्रातःकाल में यह जो सूर्य हे इसका नाम वामन अवतार है जब यह वामन प्रातःकाल में यह जो सूर्य उदय होता है तो उदय होते ही मुनिवरों! देखो, रात्रि अध्यानं सबसे प्रथम देखो, प्रकृति को अपने कणों से माप लेता है और द्वितीय पग में बेटा! देखो, वह अमृतं ब्रह्मा वर्णनम् वह भू मण्डल को माप लेता है और तीसरे में मुनिवरों! देखो, स्वः को माप लेता है। मेरे प्यारे! देखो, उनको माप करके इसको सबको प्रकाश में रत्त कर देता है। हमारे यहां जब विज्ञानवेत्ता अपने में विद्यमान हो करके बेटा! तीन प्रकार के परमाणुओं को मापने लगते हैं सबसे प्रथम गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी परमाणुओं को माप करके बेटा! नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करते हैं अथवा लोक लोकान्तरों की उड़ाने भी उड़ते रहते हैं तो विचार आता है मुनिवरों! देखो, इस सम्बन्ध में मैं विज्ञान में तुम्हें ले जाना नही चाहता हूं। विचार केवल यह कि हमारे यहां बहुत सी वार्त्ताएं अलंकारिक हैं और उनको अलंकार के रूप में हमे सदैव उद्गीत गाना चाहिए। अब अलंकार और देखो, साहित्य की दोनों कि सन्तुलना करते हैं तो बेटा! देखो, उसमें धृष्टता आ जाती है

तो हम इतिहास को इतिहास में ही परणित करते चले जाएं और अलंकार को अलंकारों में परणित करेंगें तो यह दोनों भिन्न भिन्न रहेंगें। तो विचार आता है बेटा! देखो, बलि नाम रात्रि का है और विध्यांचली उसके अन्धकार का है वामन मेरे प्यारे! देखो, सूर्य का है जो सबसे प्रथम देखो, पूर्वांचल से इस भू मण्डल को माप लेता है और द्वितीय मानो देखो, किरण से भुवः को और तीसरे में स्वः को नाप करके बेटा! देखो, यह अपने में प्रकाश देता रहता है और यह संसार प्रकाशित हो जाता है।

मानव को दानी बनने की प्रेरणा

मेरे प्यारे! देखो, यह दानं ब्रह्मा अलंकार तो है परन्तु देखो, यह विचार किया कि मानव को दानी बनना हे जैसे मानो देखो, बलि ने त्रिन्नम् ब्रह्मा देखो, सर्वत्र दान कर दिया था इसी प्रकार तू दान में परणित हो जा। मेरे प्यारे! देखो, दानं भूतं महाभारत के काल में दान की बड़ी विशेषता आई है। देखो, वह महाराजा कर्ण ने अपनी माता को सर्वत्र मानो अस्त्रों शस्त्रों का दान दे दिया था और वह दान दे करके अपने में प्रसन्न युक्त हो गए थे। मृत्यु हो जाती है परन्तु अपने कर्तव्य से मानव को विहीन नही होना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, अमृतं ब्रह्मा यह दानतत्वा। तो कहते हैं कि हे मानव! तू दानी बन और दान से क्योंकि राष्ट्र और समाज ऊंचा बनता है, मानव की प्रवृत्ति ऊँची बनती है। मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति ने जब यह श्रवण किया तो प्रजापति प्रसन्न हो गए और प्रजापति ने कहा धन्य है मानव तो बेटा! देखो, मानव को द,द,द, का उपदेश दिया।

दैत्यों को उपदेश

अब मुनिवरों! देखो, दैत्यजन आये और दैत्यों ने कहा प्रभु! हम भी अपने कल्याण का मार्ग चाहते हैं। उन्होंने उनको द का उपदेश दिया और द,द,द, ब्रह्मे तो जब वह गमन करने लगे तो प्रजापति ने कहा कहो हे दैत्यराजों! तुमने क्या श्रवण किया? उन्होंने कहा कि प्रभु आप ने कहा कि द,द,द, तो दम्र का अभिप्राय यह है

कि मानव को दयावान रहना चाहिए। देखो, दैत्य प्रवृति का प्राणी जितना दया करता रहेगा, दया में निहित रहेगा तो मेरे प्यारे! देखो, वह द,द,द, का उपदेश देखो, उदगादम् ब्रहे मेरे प्यारे! देखो, उसका कल्याण होता रहेगा। दैत्योम का कल्याण दया से है, मानव का कल्याण दान से है और दैत्यों का कल्याण दानशील रहने से है। तो बेटा! देखो, इसको विचारते हुए द,द,द, ब्रह्मा देखो, हमारे यहां दया करते रहो दयाम् ब्रह्मणं ब्रहे हमारे यहां बेटा! नाना प्रकार सम्प्रदायों का अथवा नाना प्रकार के विचारों का परम्परागतों से भी प्रायः वर्णन रहा है। परन्तु देखो, जब दैत्यजन आते हैं। तो दैत्यों का एक क्रियाकलाप है जिससे यह दया करते रहें। और दया करके मुनिवरों! प्रत्येक मानव को दया की दृष्टि से दृष्टिपात करें और दया करके मुनिवरों! प्रत्येक मानव को दयावान बनता रहेगा। तो इसीलिए देखो, दमनं ब्रह्मा दमनं देवत्वां लोकाः तो मानव को दमनशील रहना चाहिए। मेरे पुत्रों! दानशील रहना चाहिए और दैत्यों को मुनिवरों! देखो, अपने में मानो दयावान रह करके अपने कल्याण का मार्ग प्राप्त करना चाहिए। तो इस प्रकार का बेटा! प्रजापति ने यह उपदेश दिया।

इन्द्र और विरोचन को एक साथ उपदेश

बेटा! जब प्रजापति ने विरोचन और इन्द्र दोनों विद्यमान थे जब महाराजा इन्द्र को मुनिवरों! देखो, विरोचन को दोनों को उपदेश दिया। उन्होंने कहा उन्हे भी इसी प्रकार का उपदेश दिया उन्होंने प्रजापति से कहा हे ब्रह्मे। भगवन! हमारे कल्याण का इन्द्र ने कहा क्या मैं देवताओं का दूत हूं मैं देवताओं का मानो देवता हूं इन्द्र हे प्रभु! मानो मुझे देवताओं के लिए कुछ कल्याण का मार्ग दीजिए। महाराजा विरोचन ने कहा प्रभु! मैं भी विद्यमान हूं। तो विरोचन से कहा इन्द्र को दोनों को एक दूसरे को उपदेश दिया ब्रह्मणे देखो, इस मानव शरीर को ब्रह्म स्वीकार करो। तो मेरे प्यारे! देखो, इसी से तुम्हारा कल्याण होगा, इसके ऊपर अध्ययन करो। तो मेरे प्यारे! देखो, मानव शरीर की आभा को ले करके महाराजा विरोचन तो

देखो, दैत्यों की सभा में चले गए और दैत्यों ने कहा कि प्रजापति ने कहा है क्या यह शरीर ही ब्रह्म है, इसकी उपासना करो। तो मानो देखो, जो दैत्य प्रवृति के हैं। वह शरीर के पालन पोषण में लगे रहते हैं और पालन पोषण में लगे रहते हैं तो उसी को देखो, वह ब्रह्म स्वीकार करते हैं, इसी में रत्त रहते हैं।

महाराजा इन्द्र का चिन्तन व तप

परन्तु महाराजा इन्द्र ने यह विचारा कि प्रजापति ने ये कहा है को देव वृत्तम देवृत्ति मानो देखो, शरीर को द मानो। परन्तु जब मैं देवताओं की सभा में जाऊंगा तो देवता मेरे से यह प्रश्न करेंगें क्या इसमें तो यह तो रचना का गृह है यह शरीर देखो, पञ्च महाभूतों का पिण्ड कहलाता है और इसमें आत्मा अपना वास कर रहा है जब आत्मा इसमें वास करता है पञ्च महाभूतों का पिण्ड बना हुआ है तो यह पिण्ड ब्रह्म कैसे हो सकता है। तो मेरे से कोई उत्तर नही बन सकेगा। तो वह पुनः प्रजापति के द्वार पर पंहुचें और प्रजापति से कहा हे प्रभु! देखो, मैं इस शरीर को ब्रह्म स्वीकार नही कर सकता हूं क्योंकि यह तो आत्मा का गृह है और गृह तो देखो, कदापि भी ब्रह्म नही होता। वह तो आत्मा के विश्राम करने का गृह है। वह ब्रह्म की आभा में रत्त रहने वाला है। मेरे प्यारे! प्रजापति ने कहा हे इन्द्र! तुम मेरे यहां इक्कतीस वर्ष तक ब्रह्मचारी रहो। तो मुनिवरों! देखो, वह तपस्वी बनने लगे। इक्कतीस वर्ष तक जब उन्होंने तपस्या की।

मन की दशा

तपस्या के पश्चात पुनः प्रजापति के द्वार पर पंहुचें और प्रजापति से कहा हे प्रभु! मानो ब्रह्म का ज्ञान कराईये। उन्होंने कहा जाओ मानो देखो, अमृतं ब्रह्मणं व्राताः तुम ब्रहे वृत्ति हो मन को ही ब्रह्म स्वीकार करो। मेरे प्यारे! देखो, वह वहां से गमन किया और देखो, विचारने लगे कि जब मैं देवताओं के द्वार पर पंहुचूंगा तो देवता यह प्रश्न करेंगे क्या यह मन कैसे ब्रह्म हो सकता है क्योंकि वह जो मन आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान होता है और उस मानो चित्त के मण्डल में जो संस्कार हैं

उनको दृष्टिपात करके वह नवीन जगत का निर्माण करता है। मानो स्वप्न में सर्वत्र हमारे शरीरों मे मानो देखो, पत्नियां नही होती पत्नियों का निर्माण हो जाता है और पत्नियों से शरीरों में पति नही होता परन्तु पतियों का निर्माण हो जाता है वर्णस्सुतम, निर्माण हो जाता है द्रव्यहीन बन जाते हैं, द्रव्यहीन द्रव्यपति बन जाते हैं मानो स्वप्नवत में तो यह स्वप्नावस्था मानो यह तो मन की दशा है मैं स्वप्नावस्था को ब्रह्म कैसे स्वीकार करूं? मानो देखो, यह ब्रह्मणं व्रव्हा स्वस्ति नही हो सकता। जब बेटा! देखो, प्रजापति के वाक्यों का मन्थन किया तो उन्होंने कहा कि ये ब्रह्म नही होगा मानम् ब्रव्हे। बेटा! वहां से गमन करते हैं और प्रजापति के द्वार पर पंहुचें । उन्होंने कहा प्रभु! यह जो आपने कहा है कि स्वप्नावस्था जो मन की दशा है इसी को ब्रह्म स्वीकार करो तो भगवन! मैं स्वीकार नही करता। क्योंकि देवताजन जब यह प्रश्न करेंगें क्या स्वप्न में तो मानो देखो, यह मन आत्मा के प्रकाश में सर्व जगत का द्रष्टा बन जाता है। शरीर में नद नदियों नही होती उसका निर्माण कर लेता है। पत्नी नही होती पत्नियों का निर्माण कर लेता है पति नही होते निर्माण हो जाता है परन्तु देखो, द्रव्यपति और देखो, सर्वद्रष्टा बन जाता है। तो हे प्रभु! मैं इसको स्वीकार नही करूंगा क्योंकि देवता तो यह प्रश्न करेंगें। मेरे प्यारे! देखो, वहां से उन ब्रह्मण से कहा जाओ तुम मानो देखो, यह जागतं ब्रह्मा वर्णस्सुतम् मानं ब्रही चित्तं देवो कृतं देवाः वेद की आख्यिका प्रगट करते हुए प्रजापति ने कहा क्या हे इन्द्र! जाओ तुम इकतीस वर्षों तक तपस्या करो।

सुषुप्ति अवस्था

बेटा! यह इकतीस वर्ष की पुनः तपस्या करने लगे। उन्होंने कहा कि यह जो मानो सुषुप्ति अवस्था है उसका नाम ब्रह्म है। ऋषि ने जब देखो, अमृतम् शान्त हो जाता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने सबसे प्रहे जब वह सुषुप्ति में चले गए तो देखो, इन्द्र ने विचारा क्या देवता जब यह प्रश्न करेंगें क्या सुषुप्ति को ब्रह्म कैसे है यह तो मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार की साम्यावस्था का नाम है। यह मन मानो देखो, उसके

गर्भ में प्रवेश हो जाता है मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार यह साम्यावस्था में चले जाते हैं तो बेटा! उसको सुषुप्ति कहते हैं, इन्द्रियां अपने क्रियाकलापों को शान्त कर देती हैं मन अपने क्रियाकलापों को शान्त करता है तो यह ब्रह्म नही हो सकता मेरे प्यारे! देखो, यह वाक श्रवण करते हुए प्रजापति तो अमृतम् मानो इन्द्र, इन्द्र ने पुनः जब यह विचारा। पुनः प्रजापति के द्वारा पर पंहुचें और प्रजापति से कहा प्रभु! ये जो आपने कहा है मैं इसको ब्रह्म स्वीकार नही करूंगा। हे प्रभु! यह जो सुषुप्ति अवस्था है मन, बुद्धि, चित्त और अहङ्कार अपने साम्यावस्था में प्रवेश कर जाते हैं और साम्यता का नाम ही मानो देखो, निन्द्रा में निद्रित हो जाता है। एक दूसरा गुणगान करना शान्त कर देता है वह अप्रिया रत्तों में रत्त हो जाता है। हे प्रभु! देवता मुझसे यह प्रश्न करेंगे तो मैं उत्तर नही दे सकूंगां।

जाग्रत अवस्था

मेरे प्यारे! देखो, प्रजापति ने कहा हे इन्द्र! तुम जाग्रत अवस्था को ही ब्रह्म स्वीकार करो और प्रजापति इन्द्र बेटा! यह विचारने लगे कि जाग्रत में तो विभाजन होता रहता है। मानो देखो, नेत्रों के साथ में जब आत्मा का प्रकाश आता है तो देखो, यह विभाजन करता रहता है यह माता है, यह पिता है, यह पुत्र है, ये पुत्र वधु है, पुत्रियां हैं मानो देखो, यह संसार का विभाजन करता रहता है। नेत्रों से दृष्टिपात करता मन उसके साथ रहता है तो यह तो विभाजन क्रिया है। मानो देखो, मैं जागृत को ब्रह्म स्वीकार नही कर सकता।

आत्मा से चेतना

मेरे प्यारे! देखो, महाराजा इन्द्र उस समय चिन्तन करने लगे, जब मनन करने लगे, जब उनसे ब्रह्म स्वीकार नही किया गया तो बेटा! वहां से पुनः गमन किया और प्रजापति से कहा प्रभु! जब मैं देवताओं के द्वार पर पंहुचुंगा तो देवता जब यह प्रश्न करेंगें। ब्रह्मज्ञानी कौन है तो प्रभु मैं इसका उत्तर नही दे सकूंगां। यह जाग्रत और विभाजन क्रिया है। संसार में जितना भी विभाजनवाद है वह सब

जागरूकता में नेत्रों से देखो, आत्मा होता है अथवा नेत्रों के साथ में मन होता है और बुद्धि होती है वह द्रष्टा बन करके मानो देखो, नेत्रों से दृष्टिपात करते रहते हैं। और नेत्रों के पिछले विभाग में एक गोलक सा बना हुआ है। यह गोलकने के पिछले विभाग में एक पीला पटल है पीले पटल के पिछले विभाग में कहीं से चेतना आ रही है और वह चेतना आत्मा की है तो हे प्रभु! जब यह चेतना आत्मा की है तो मैं इसको जाग्रत में इसको मैं कैसे स्वीकार करूंगां? क्योंकि यह तो आत्मा का प्रतिबिम्ब है, आत्मा का गोलक है जिसमें यह वास करता है। जैसे गृह में गृहस्वामी और गृहपति रहते हैं और गृहस्वामिनी रहते हैं तो बेटा! यह गृह अद्भुत कहलाता है तो मानो इसी प्रकार मैं इसको स्वीकार नही कर सकता।

ब्रह्म का स्वरूप

वह जब पुनः प्रजापति के द्वार पर पंहुचें तो प्रजापति ने कहा हे इन्द्र! तुम पांच वर्ष की तपस्या और करो। तो बेटा! उन्होंने पांच वर्ष का तप किया। एक सौ पांच वर्ष तक बेटा! उन्होंने इन्द्र ने तप किया और तप करने के पश्चात उन्होंने कहा हे इन्द्र आओ, विराजो। वह विराजमान हो गए। तो उन्होंने कहा क्या यह जो संसार है जो इसका आयतन कर रहा है वही ब्रह्म है। मानो जैसे नेत्र हैं, नेत्रों के पिछरले विभाग में और नेत्रों का नियमन कर रहा है उसी का नाम ब्रह्म है। जो मानो देखो, श्रोत्रों से शब्दों का श्रवण करता है और शब्दों के द्वारा जो देखो, इन श्रोत्रों का नियमन कर रहा है उसी का नाम ब्रह्म है मानो देखो, इसी प्रकार घ्राण है जो घ्राण का नियमन कर रहा है उसी का नाम ब्रह्म है, तुम इसको स्वीकार करो। मेरे प्यारे! देखो, वह प्रसन्न हो गया और उन्होंने कहा कि यह तो आयतन माने जाते हैं मानो देखो, वह परब्रह्म परमात्मा एक अमूल्य वस्तुतः वह हमारे को चेतनित बना रहा है। आत्मा का भी जो नियमन कर रहा है आत्मा इन पांच महाभूतों के बीच में रहता है।

आत्मा का लोक

मेरे प्यारे! जैसे महात्मा जालवी से ये प्रश्न किया गया क्या महाराज आत्मा का लोक क्या है? तो यह कहता है कि आत्माम् भूतम् लोकाम् पञ्चम् ब्रव्हा यह पञ्च महाभूतों के लोक में वास करने वाला है और यह शरीर पञ्च महाभूतों का लोक है परन्तु इसमें आत्मा वास करता है और आत्मा मानो देखो, ब्रह्म है और आत्मा को भी देखो, जो आयतन में ला रहा है आयतन कर रहा है परब्रह्म परमात्मा है वह परब्रह्मे जो आत्मा को भी मानो गतिवान बना रहा है। वह विभु है क्योंकि यह संसार अणु में निहित हो रहा है और देखो, परमात्मा विभु है जो उसे अपने में उसका आयतन कर रहा है अथवा उसका निर्माण कर रहा है। तो आओ मेरे प्यारे! ब्रह्म के ऊपर विचार विनिमय विशेष नहीं परन्तु महाराज इन्द्र बड़े प्रसन्न हुए और इन्द्र ने कहा प्रभु! आप को धन्य है। तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्म का ज्ञानी वह बनता है, जो तपस्वी होता है जो एक एक वस्तु को जान करके द्वितीय वस्तु में वह संलग्न होता है।

मेरे प्यारे! एक दूसरा प्राणी प्राणी में ओत प्रोत हो करके परब्रह्म को जानने में बेटा! वह लगा रहता है। तो विचार आता रहता है कि जैसे गृहस्वामी और गृहस्वामिनी अपने गृह को पवित्र बनाते हैं इसी प्रकार मानो देखो, इन्द्रियों को पवित्र बनाने के लिए हमें पञ्च महाभूतों की आवश्यकता है और पञ्च महाभूतों का जो आयतन कर रहा है वह आत्मा है और वह आत्मा का भी जो आयतन करने वाला है बेटा! उसे ब्रह्म स्वीकार करते हैं। तो विचार आता रहता है बेटा! प्रत्येक मानव को विचारना है कि हम उस परब्रह्म परमात्मा से प्रार्थना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते रहें क्योंकि वह परमपिता परमात्मा एक एक कण कण में व्याप्त है और मानो देखो, यह संसार उसकी यज्ञशाला है और वह उस यज्ञशाला में मेरे प्यारे! वह ब्रह्म बन करके याग हो रहा है। तो विचार आता है बेटा! आज का हमारा विचार क्या हम परमपिता परमात्मा कि आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए उस परब्रह्म परमात्मा के लिए हम देवता बनने में

मानो देखो, हमें धर्म ध्वनि अपनानी होगी और धर्म कहते हैं जो मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित है और समाहित होने से ही वह धर्म है और मेरे पुत्रों! देखो, उस धर्म को अपना करके परब्रह्म परमात्मा के समीप जाने के लिए हम सदैव तत्पर हो जाएं।

कल्याण का मार्ग

आज का विचार क्या हम परमपिता परमात्मा से उस आयतन को जानना चाहते हैं जिसके द्वारा हमारा वास्तव में कल्याण होता है। हम कल्याण के मार्ग को चाहते हैं। प्रत्येक मानव संसार में सुखद और आनन्द चाहता है। और आनन्द वहां प्राप्त होता है, जो स्वतः आनन्दित होता है। वह परमात्मा आनन्दित है और परमात्मा को आनन्दित स्वीकार, करके बेटा! देखो, मानव अपने में आनन्दित होता है। हम अपने में विचार विनिमय करते हुए इस सागर से पार होने का प्रयास करें। बेटा! आज के हमारे वाक उच्चारण करने का अभिप्राय ये क्या महाराज इन्द्र और देखो, जो विरोचन दैत्य प्रवृति के हैं वह इस शरीर को ही मेरे प्यारे! ब्रह्म स्वीकार करते हैं इसी के पालन पोषण में लगे रहते हैं, परन्तु जो ब्रह्मवादी हैं वह ब्रह्म को स्वीकार करके एक एक कण कण में ब्रह्म स्वीकार करके और इस शरीर को पञ्च महाभूतों का पिण्ड स्वीकार करके, आत्मा का गृह स्वीकार करके बेटा! देखो, ब्रह्म को जानते हैं वह ब्रह्म में परणित हो करके वह मोक्ष की पगडण्डी ग्रहण करते हैं वह ब्रह्म में परणित तो यह है बेटा! आज का वाक आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि महाराज इन्द्र और प्रजापति यह सर्वत्र मेरे प्यारे! प्रजापति नाम परमात्मा का है इन्द्र नाम मुनिवरों! देखो, आत्मां भूतं ब्रह्मे अव्रताः इन्द्र कहते हैं जो देवताओं का धिराज है। जो इन्द्रं ब्रह्मे जो आत्मा के रूप में परणित किया जाता है और मेरे प्यारे! विरोचन कहते हैं जो दैत्य प्रवृति के प्राणी है वह पालन पोषण में, आहार व्यवहार में लगे रहते हैं परन्तु परमात्मा का दर्शन करने वाला परमात्मा को प्राप्त होता है।

920211_12 से 13

यह है बेटा! आज का वाक मैं विशेष चर्चा तुम्हे प्रगट करने नही आया हूं विचार यह देने के लिए आया हूं कि हमे परब्रह्म परमात्मा की महिमा का गान गाना चाहिए और गान गाते हुए मुनिवरों! देखो, सुषुप्ति में चले जाए जहां मुनिवरों! देखो, आत्मा और प्राण के साथ में गमन करने वाला मुनिवरों! देखो, इस मन का सूत्र में सूत्रित किया जाता है ब्रह्मचरिष्यामि जैसे बेटा! ब्रह्म और चरी को दोनों को जान करके इनका मनका बना करके ब्रह्मसूत्र में पिरोने से ब्रह्मसूत्र एक बन जाता है। जैसे मानव जब सुषुप्ति में जाता है तो यह मुनिवरों! देखो, अमृतं देखो, यह प्राण ही जागता है आत्मा के साथ जागता है आत्मा के प्रकाश से प्राण अपनी गतियां करने लगता है तो आओ, मेरे प्यारे! आज का विचार वह प्राणं ब्रह्मे देखो, श्वांस के साथ में मनका बन करके और वह ब्रह्म में ब्रह्मसूत्र में पिरोया जाता है। तो वह बेटा! आज का हमारा वाक आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस सागर से पार होना चाहते हैं। हम ब्रह्मज्ञानी बनें ब्रह्मवेत्ता बने एक एक इन्द्रियों को जान करके बेटा! इस सागर से पार होने का प्रयास करें।

आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय ये क्या हम देवत्तं देखो, देवता बन करके विचरण करें। हम दैत्य न बनें मानो देखो, दैत्यों का क्रियाकलापम् दया अन्तरं ज्ञानं ब्रव्हे अस्सुतं देवतं दमन अस्ते बेटा! देखो, दमनशील रहें और दमनशील ही मुनिवरों! देखो, परमात्मा को जो पाता है। तो वह आज का वाक अब हमारा सम्पन्न होने जा रहा है। आज के वाक उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परब्रह्म परमात्मा को जानने वाले बनें और देवत्व को प्राप्त हो करते हुए इस सागर से पार हो जाएं। यह है बेटा! आज का वाक समय मिलेगा मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा। ओ३म् देवाः आभ्यां मनुगायन्त्वा रथं आपाऽम्। ओ३म् देवाऽम् लोक प्रा रथं आपाऽम्। अच्छा भगवन आज्ञा।